स्मार्त्त निराला

सम्पादक :
नरेश शर्मा गुलशन, एम० ए०

सहसम्पादक :
भगवान मित्र

स्मार्त्त-निराला

[दूसरा खण्ड]

संपादक मंडल—

नरेश शर्मा गुलशन, एम० ए०,

(संपादक 'नवजागरण' मसौढ़ी) पटना

भगवान मिश्र, बी० ए० एल० टी०

(विशारद) व्याख्याता

प्राथमिक शिक्षक शिक्षा महाविद्यालय मसौढ़ी (पटना)

मूल्य

प्रकाशक:—

श्री सूरज प्रसाद मिश्र, कार्यकारी अध्यक्ष 'निराला' परिषद

३४ कल्याणी रोड साकची, जमशेदपुर।

प्रकाशक
श्री सूरज प्रसाद मिश्र, कार्यकारी अध्यक्ष
निराला परिषद, जमशेदपुर

प्रथम संस्करण १९७
वसन्तपंचमी १९७२, सवत २०२८

मुद्रक:—
संजय प्रिंटिंग प्रेस मसौढ़ी, (पटना)

'स्मार्त निराला' प्रथम खण्ड के सम्बन्ध में पत्र और अनुशंसा

राष्ट्रपति सचिवालय
राष्ट्रपति भवन, नईदिल्ली
पत्रावली संख्या १५-जी ७१ अप्रैल २०, ७१

प्रिय महोदय

राष्ट्रपति जी के नाम भेजी "स्मार्त निराला" नाम पुस्तिका की एक प्रति प्राप्त हुई, जिसके लिए उनकी ओर से धन्यवाद स्वीकार करें। पुस्तक पठनीय तथा प्रयास स्तुत्य है।
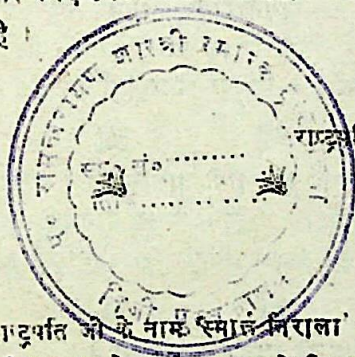
भवदीय
खेमराज गुप्त
राष्ट्रपति के अपर निजी सचिव

भारत के उपराष्ट्रपति के सचिव
नई दिल्ली जून २, १९७१

प्रिय महोदय,

उप-राष्ट्रपति जी के नाम 'स्मार्त निराला' की एक प्रति सहित आपका पत्र दिनांक २० मई १९७१ को प्राप्त हुआ इसके लिए हार्दिक धन्यवाद स्वीकार करें। पुस्तक का प्रकाशन साहित्य और समाज के लिए उपयोगी है।

आपका
वि० फड़के

सफदरजंगलेन
नई दिल्ली—११
मई ३, १९७१

प्रियवर,

'स्मार्त निराला' की प्रति मिली। धन्यवाद। समझ में नहीं आया कि आप ने यह नाम क्यों चुना ?। निराला जी श्रुति के पालक और स्मृति के विरोधी थे। प्रत्येक क्रांतिकारी कहीं न कहीं स्मृति का विरोध करता है। श्रुति नहीं बदलती। स्मृत्तियों में परिवर्त्तन होते रहता है।

आपने सामग्री अच्छी जुटायी है। मेरी बधाई स्वीकार करें।

आपका
रामधारी सिंह दिनकर

'स्मार्त निराला' का पहला खण्ड पढ़ने का सुअवसर प्राप्त हुआ। निराला जी जैसे महान् व्यक्तित्व के अंशों से प्रेरणा प्राप्त करना एवं समाज तथा साहित्य के लिए आजीवन संग्राम करने वाले 'निराला' जी की याद में 'स्मार्त निराला' का प्रकाशन इस घोर भौतिकवादी युग में क्या विलक्षण नहीं है? इस पुस्तक में 'निराला' जी के विचारों के प्रचारार्थ विविध निबंध प्रकाशित किए गये हैं। रचना की विविधता के बाद भी मेरा आग्रह होगा कि 'निराला' जी के उन विचारों का जो अछूते रह गए है, साहित्य में खोज की नई प्रेरणा जगा देना उनके प्रति सच्ची भक्ति होगी।

जगनारायण पाण्डेय, एम० ए० डिप-इन-एड
प्रखण्ड शिक्षा प्रसार पदाधिकारी
ग्राम पो०—शिवपुर दीयर (बलिया यू० पी०)

❦ ❦ ❦ ❦ ❦

यह संकलन हिन्दी-काव्य-गगन को स्थायी आलोक प्रदान करेगा।

रामदयाल पाण्डेय
भूतपूर्व अध्यक्ष, बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन, पटना

❦ ❦ ❦ ❦ ❦

प्रस्तुत पुस्तक हिन्दी साहित्य की अद्भुत उपलब्धि है।

डा० पूर्णमासी राय
हिन्दी विभाग
मगध विश्वविद्यालय, गया

❦ ❦ ❦ ❦ ❦

'स्मार्त निराला' की प्रति मिली। इसके लिए मैं आप को धन्यवाद देता हूँ। पुस्तक सराहनीय है।

आपका
डॉ० स्वर्णकिरण
किसान कॉलेज सोहसराय (पटना)

❦ ❦ ❦ ❦ ❦

प्रिय गुलशन,

'स्मार्त निराला' की प्रति मिली। इसके लिए धन्यवाद। प्रयास सराहनीय है।

आपका
आचार्य श्री कृष्ण प्र० गुप्त शशिकर (चक्रधरपुर)

दिनांक ७-५-७१

प्रिय श्री नरेशजी, शुभस्मरण।

'स्मार्त्त निराला' की प्रति मिली। धन्यवाद। प्रस्तुत पुस्तक में निराला के जीवन और साहित्य के सम्बन्ध में अधिकारी विद्वानों द्वारा प्रस्तुत प्रामाणिक सामग्री का सुन्दर संचयन सम्पादन हुआ है, जिसके लिए सम्पादक बधाई के पात्र हैं।

मुझे विश्वास है इसका हिन्दी संसार में भव्य स्वागत होगा और आपके कार्य की लोकप्रियता सम्पूर्ण हिन्दी-भाषा-भाषी जगत में प्रचुर रूप में फैलेगी।

इस सुन्दर अंक के लिए धन्यवाद और बधाइयां स्वीकार करें।

आपका शुभ चिंतक,
डॉ० भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव'
प्राचार्य गया कालेज, गया।

१०-५

प्रियवर,

आपकी भेजी हुई 'स्मार्त्त निराला' की प्रति मिली। साहित्यिकों एवं उच्चतम वर्ग के विद्यार्थियों के लिए यह पुस्तक अधिक उपादेय होगी। इसके लिए धन्यवाद।

आपका
डॉ० रामविलास शर्मा
हिन्दी विभागाध्यक्ष
राजपूत बलवन्त कालेज आगरा

दिनांक १५-१-७१

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि निराला-परिषद, मसौढ़ी द्वारा महाप्राण "निराला" की पुण्यस्मृति में आगामी वसन्तपञ्चमी को 'निराला-स्मृति-ग्रन्थ' का प्रकाशन हो रहा है। मैं परिषद के इस प्रयास के पूर्ण साफल्य की कामना करता हूँ और इस योजना से सम्बन्धित सभी कार्यकर्ताओं को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

रामकृष्ण त्रिपाठी (इलाहाबाद)

प्रस्तुत संग्रह भावी पीढ़ी के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगा।

आचार्य प्रो०—कमलापति शास्त्री
स्वामी सहजानन्द कालेज,
जहानाबाद (गया)

भूमिका

काव्य के चार चरणों में हिन्दी के दारु पथ को पार करने वाले कवि सम्राट श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी- 'निराला' के सम्बन्ध में कुछ भी लिखना सूर्य को दीपक दिखाना है। 'निराला' जी जीवन-पर्यन्त जीवन से जूझते रहे और साहित्य सेवा करते रहे फिर भी हमारी सरकार की आँखें नहीं खुलीं। स्वाभिमानी कवि जीवन जीने की पद्धति, साहित्य, समाज, शिक्षा और राजनीति में आमूलचूल परिवर्तन करना चाहता था। उन्होंने अपने जीवन को देश, समाज और साहित्य के लिए समर्पित कर दिया।

उनका सम्पूर्ण साहित्य हिन्दी साहित्य का अक्षय कोष है। उन्होंने साहित्य की प्रत्येक विधा पर अपनी लेखनी चलायी। 'निराला' जी सधे हुए चिन्तक, दार्शनिक पंडित और विद्वान थे। उनके काव्य का आलोड़न कर मानव-मात्र फूले नहीं समा रहा है। वे हिन्दी-काव्य-गगन के सूर्य हैं जिन्होंने अपने प्रकाश से अनेक चन्द्रों को पैदा किया। यह उनकी विलक्षण प्रतिभा का परिचायक है। यहाँ तो विलायती चश्में से देखने का रिवाज-सा चल गया है क्योंकि जबतक किसी वस्तु पर विदेशी मुहर नहीं लगती तबतक वह वस्तु श्रेष्ठ नहीं मानी जाती है। यही बात कवि शिरोमणि 'निराला' जी के साथ भी लागू होती है।

यह 'स्मार्त्त निराला' का दूसरा खण्ड है। प्रथम खण्ड के सदृश दूसरे खण्ड में भी देश भर के उच्च कोटि के विद्वानों के निबन्धों का संग्रह किया गया है। महाकवि 'निराला' जी पर तो बहुत साहित्य लिखे गये हैं फिर भी बहुत से अंश अछूते हैं। उनका प्रतिदान करने का ही हमारा लक्ष्य है।

पुस्तक कहाँ तक अच्छी बन पड़ी है इसका निर्णय तो पाठक और समालोचक करेंगे। सुझावों का सादर स्वागत करूँगा।

हिन्दी साहित्य के विकास में अभी भी हिन्दी वाले ही दोषी हैं। केवल अहिन्दी भाषी लोगों पर यह कलंक थोपना सरासर बेइमानी होगी।

भवदीय: —

नरेश शर्मा 'गुलशन' एम० ए०

सम्पादक—'नवजागरण'

हिन्दी त्रैमासिक (मसौढ़ी)

विषय-सूची

कवि-स्तवन

१

निर्धूम-वह्नि-क्षारावृत्त-स्फुलिंग !
बालारुण संवृत्त-असित-गगन-घन-पटल-पुंज !
प्रथमेंदु तमस्-आच्छन्न, विवर्द्धित सोम-कुंद।
जाज्वल्यमान उद्भासित, अक्षर-ज्योति-पिंड !
उद्दाम प्रखरतर भास्वर !

२

क्षुब्धाब्धि-अंध-जीवन-मंथन—
धृति-क्षमा-प्रभृति-अतिमेरुदण्ड,
पल-पल, अनुक्षण प्रत्यावर्तित भावना-रज्जु,
चिति देव-दनुज-दुर्दम-अखण्ड—
भव-सुधा-दान, विषपान, स्वयंभू-सत्वर !

३

अर्गला-विषम-भव-बंध-ग्रसित
बहुवर्ण-अर्थ-स्थिति-कालभेद,
रागानुराग-मितिहीन, खंड-षड्-रिपुमर्दितशत-शतप्रभेद,
निर्बंध-अभय-निर्भेद-परंतप-बुधवर !

४

भवाभाव-आक्रांत्-अदम-केहरि-नर !
धृत भस्म अंग बहु नवाभरण द्युतिवारण-रंजित।
हृत-वर-त्रिशूल-संवरित, सपदि उत्फुल्ल !
मनः भाव संचरित त्रिपथगा पावन जगजन-वंदित,
बहुरत्न दान दिग्वसन, पराभव-अघहर !

५

निर्वेद, वेदना-वलित, अचंचल-गतिमय।
वैभिन्य-विकर्षित, वंद्य, व्यंग्य-विषवाण विचक्षण वर्षण,
रत-सतत-अमित-संग्राम, अनिन्दित वैभव।
उत्क्रमित-उदित-यशकल्प, दनुज-खलदल हृत्-कर्षण
बहुश्रुत, बहुज्ञ शुचिआप्त, अमर-अति अवढर।

—०—

भगवान मिश्र
[illegible] ० ए० एल० टी० (विशारद) व्याख्याता
प्राथ[illegible] शिक्षा [illegible]

निराला की भक्ति-भावना

—डा० वचनदेव कुमार, एम० ए०
(हिन्दी-संस्कृत) पी० एच० डी०, डी० लिट० (पटना विश्वविद्यालय)

विद्रोही कवि निराला, जो सामाजिक चेतना से अनुप्राणित साहित्य-सृजन करते रहे, वही सहसा अपने को भगवान् की ओर उन्मुख कर दें, ईषत् आश्चर्य बोधक अवश्य लगता है। निराला न तो किसी मृगेक्षिणी की फटकार खाकर ही ईश्वरोन्मुख हुए, न विद्यापति की तरह जीवन की अस्तवेला में पाप-प्रक्षालनार्थ भक्ति-गीत लिखने लगे, न सुजन समाज को रिझाने के लिए 'हरि गोविन्द सुमिरन' का बहाना करते रहे, न नौ सौ चूहा खाकर बिल्ली चली हज को जैसी लोकोक्ति को चरितार्थ करते रहे, बल्कि इस क्रान्तिकारी कवि के अंतःस्तल में भक्ति की अन्तः सलिला सदा स्पंदशील रही। अनेकानेक क्रान्तिकारियों की जीवन-कथा हमें ज्ञात है, जो राष्ट्रीय स्वातंत्र्य संग्राम में सम्मिलित होने के पूर्व माँ काली के मन्दिर में प्रविष्ट हो आशीष ग्रहण करते थे। अतः वे "अंगं गलितं पलितं मुंडं दशन-विहीनं जातं तुंडम्" की स्थिति प्राप्ति के उपरान्त काँपती थर-थराती उंगलियों से सुमरिनी पकड़ कर अंत समय में रामोच्चार कर अपवर्ग प्राप्ति के आकांक्षी नहीं थे, वरन् उनके कवि जीवन के आरम्भ विन्दु से ही उनपर हम आस्तिकता एवं भक्ति का मजीठ रंग पाते हैं।

गीतिका के प्रारम्भिक गीत को ही देखें :—

वर दे, वीणावादिनी वर दे !
प्रिय स्वतन्त्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे !

काट अन्ध-उर के बन्धन-स्तर
बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर,
कलुष-भेद-तम हर प्रकाश भर
जगमग जग कर दे !

इसके कारण अनेक कहे जा सकते हैं; किन्तु समाज शास्त्रीय आधारों पर कहा जा सकता है कि निराला का सारा जीवन ही करुण-काव्य रहा। उनके सांसारिक दु:खों का क्या कहना ? शैशव-काल से ही वे जीवन-रण में जूझते रहे, और पुरस्कार स्वरूप उन्हें पराजय ही मिली। सरोज के अप्रमय निधन ने तो उनकी कमर तोड़ दी। अरमानों की चिता धू-धू कर जल उठी।

दु:ख ही जीवन की कथा रही
क्या कहूँ आज जो नहीं कही—सरोज स्मृति (अनामिका)

इतना ही नहीं, तन भग्न हो उठा है, मन रुग्ण हो उठा है, तथा जीवन विपन्न हो उठा है। अत: इस रिक्तसार आनन्द शून्य जीवन से क्या होने वाला है। सांसारिक व्यक्तियों से तरह-तरह की आशाएं की गयीं, किन्तु किसी से मनोरथ पूरा नहीं हुआ। अतः चित्त शान्ति के लिए सान्त्वना की अमोघ औषध के लिए अब प्रभु के अतिरिक्त और कौन आश्रय-स्थल हो सकता है ? इस तरह निराला ने अपने को ईश्वर की ओर मोड़ दिया। उनके काव्य में भक्त्यात्मक मनोदशाओं की अभिव्यक्ति के अध्ययन के पूर्व भक्ति पर संक्षेपत: विचार कर लेना आवश्यक है। भक्ति की परिभाषाएँ इस प्रकार दी गयी हैं:—

१ सा परानुरक्तिरीश्वरे

ईश्वर में अतिशय अनुरक्ति ही भक्ति है।

२ सा त्वस्मिन् परमप्रेमरूपा

भक्ति ईश्वर के प्रति परम प्रेम रूपा है।

३ स्नेह पूर्व मनु ध्यान भक्तिरित्युच्यते बुधैः

पंडितों के द्वारा स्नेहपूर्वक परमात्मा में ध्यान लगाना ही भक्ति है।

४ ईश्वर के प्रति भक्ति परम प्रेम के सिवा और कुछ नहीं।

अतः भक्ति उसे कहेंगे जब भक्त अपने को लघुतम मानता है और भगवान् को महत्तम और उसके समक्ष अपने पापों का चित्रगुप्त-खाता उपस्थित करता हुआ, उसे नाना विशेषणों से विभूषित करता हुआ शरण में ले लेने की प्रार्थना करता है। निराला भी अपने भगवान् की प्रशंसा से अघाते नहीं। वे 'परम रमण, पाप शमन तथा स्थावर-जङ्गम के जीवन' हैं। वे 'अक्षर' 'अमर' हैं। उन्होंने अमित असुरों का संहार किया है। उनकी कृपा से ही दुरित दोष दूर होते हैं, और सकल विश्व में विजय-घोष गूँजने लगता है। भक्तों के लिए वे आशुतोष ही हैं। यथा —

"तन मन, धन वारे हैं
परम--रमण, पाप--शमन
स्थावर जङ्गम जीवन
उद्दीपन, संदीपन
सुनयन रतनारे हैं।
उनके वर रहे अमर
स्वर्ग धरा पर सञ्चर,
अक्षर —अक्षर —अक्षर
असुर अमित मारे हैं।
दूर हुआ दुरित, दोष
गूँजा है विजय घोष
भक्तों के आशुतोष
नभ नभ के तारे हैं।" (अर्चना, पद सं० ४६)

इस तरह निराला अनेकानेक गीतों में ईश्वर की महत्ता का स्तवन करते

हैं। कई पदों में कबीर की तरह सांसारिक असारता एवं भयंकरता का वर्णन करते है, क्योंकि जबतक संसार सारयुक्त मालूम पड़ता रहेगा, तबतक व्यक्ति उसके नागपाश से मुक्त नहीं होगा। असारता और भयंकरता से सम्बद्ध पंक्तियाँ देखें—

लिया-दिया तुमसे मेरा था,
दुनिया सपने का डेरा था—
× × ×
कठिन यह संसार, कैसे विनिस्तार ?
ऊर्म्मि का कपाथार कैसे करे पार ?
अयुत भंगुर तरङ्गे, टूटता सिन्धु
तुमुल, जल बल-भार, क्षार-तल कुल बिन्दु,
तट विटप लुप्त, केवल सलिल-संहार।
ऋतु-वलय सकल क्षय नाचते हैं यहाँ,
देख पड़ता नहीं, आँचते हैं यहाँ,
सत्य में झूठ, कुहरा भरा संभार" (अर्चना पृ०सं० ७५)

अतः इन विकराल विभीषिकाओं से संत्रस्त होकर कवि भगवान् की शरण के सिवा अन्य कोई उपाय नहीं समझता। इसलिए उसकी याच्ना है—

जगज्जाल छाया,
माया ही माया
सूझता नहीं है पथ
अन्धकार आया'
तिमिर-भेद शर दो" (अर्चना पद सं० ६०)

पुनः वह वासना-क्षय के लिए प्रार्थना करता है क्योंकि राम और काम का एकाश्रय नहीं। वह कहता है—

मानव का मन शांत करो हे
काम, क्रोध, मद, लोभ, दम्भ से
जीवन को एकान्त करो हे

इसके साथ ही रवीन्द्रनाथ ठाकुर की गीतांजलि की पंक्तियाँ स्मरण आती हैं

जहाँ भाव साम्य दर्शनीय है—

'अन्तर मम विकसित करो
अन्तर तर हे
निर्मल करो, उज्ज्वल करो
सुन्दर करो हे
जाग्रत करो, उद्यंत करो
निर्मल करो हे (गीतांजलि, पद सं० ५)

भक्ति और विनय की भूमिकाएँ—कोई भी प्रगाढ़ भक्त अपने भगवान के समक्ष विनत होकर अपनेहृदयस्थ-भावों का प्रकाशन करता है, वह अपनी वास्तविक, स्थितियों का स्पष्टीकरण करता है, अपने दोषों का स्वीकरण करता है तथा अपने कल्मष-प्रक्षालन के लिए तरह-तरह से निवेदन करता है। अतः विनय भक्ति की आवश्यक शर्त्त है और यह विनय-भाव मुख्यतया सात सरणियों में प्रवाहित होता है—

(१) दीनता
(२) मानमर्षता
(३) भयदर्शना
(४) भर्त्सना
(५) आश्वासन
(६) मनोराज्य
(७) विचारण

(१) दीनता—विषयक गीतों में निराला ने अपने आराध्य को पूर्णतः सक्षम समर्थ मानकर अपने कष्टों के निवारणार्थ प्रार्थना की है। इन गीतों में दीनता की वह दलित-गलित स्थिति नहीं है जो अन्य वैष्णव कवियों में दर्शित होती है। वे कहते हैं—

विपदा हरण हार हरि के करो पार
प्रणव से जो कुछ चराचर तुम्हीं सार—आराधना पद सं०२१

(२) आश्वासन की भूमिका में कवि का पूर्व-विचलित, भ्रांत मन शनैः-शनैः आश्वस्त होता दीखता है कि जब उस पर उसके प्रभु की वरद-सुखद छाया है, तो

पुनः इन आंतरिक और बाह्य शत्रुओं की समवेत शक्ति भी बाल-बाँका नहीं कर सकती। उदाहरणार्थ पंक्तियाँ देखें—

राम के हुए तो बने काम,
संवरे सारे धन, धान धाम— (आराधना पद सं० २०)

(३) मनोराज्य की भूमिका में निराला ने अपने इष्ट से इस प्रकार की इच्छा व्यक्त की है। प्रभु चाहें तभी भवसागर से उद्धार, कराल काल से रक्षा तथा भू-भारहरण संभव हैं। वे कहते हैं—

भजन कर हरि के चरण, मन !
पार कर मायावरण, मन !
कलुष के कर से गिरे हैं
देह-क्रम तेरे फिरे हैं
विषय के रथ से उतर कर
बन शरण का उपकरण, मन। (अर्चना पद सं० ७८)

तथा

पतित हुआ हूँ भव से तार,
दुस्तर दव से कर उद्धार
तू इंङ्गित से विश्व अपरिमित
रच रच कर करती है अवसित
किस काया से किस छायाश्रित,
मैं बस होता हूँ बलिहार। (अर्चना पद सं० ९५)

(४) विचारण की भूमिका में कवि का मस्तिष्क पक्ष प्रधान हो उठा है। वह आत्मनिवेदन की अपेक्षा दार्शनिक जटिलताओं में उलझ जाता है, माया, जीव ब्रह्मादि के व्यूह-भेदन में उद्यत हो जाता है। निराला इस बुद्धिवादी युग के कवि हैं, आज जब विज्ञान आस्था की शल्य-चिकित्सा में संलग्न है, वहाँ निराला जैसे कवि के गीतों में दार्शनिक चिंतन का आग्रह न हो, ऐसा असंभव है।

विचारण सम्बन्धी कुछ पंक्तियां देखें—

तिमिर-हरण तरणितरण किरण वर हे

नित दानव मानवगण चरण-शरण हे !
कला-सकल करतल गत,
अविगत, अविनत, अविरत
आनत आनन शत-शत
मरण-मरण हे ! (आराधना पद सं० ६९)

× × ×

मन से मिले न मिले हरि के पद,
अंश हुए न, हुए न वशंवद। (आराधना पद सं० ८२)

विनय की सप्तभूमिकाओं में मानमर्षता, भयदर्शना तथा भर्त्सना का अभाव निराला के भक्तिपरक गीतों में आश्चर्यजनक रूप से खटकता है। मानमर्षता में अभिमान-भंजन, भयदर्शना में भयोत्पादन द्वारा प्रभु-पद में आसक्ति तथा भर्त्सना में दुत्कार फटकार के द्वारा आराध्योन्मुखता की प्रवृत्तियाँ देखी जाती हैं। ये तीनों भूमिकाएँ गोस्वामी तुलसीदास के पदों में पूर्णतः दर्शित होती हैं। कारण स्पष्ट है तुलसी का दास्य अपने शीर्ष विन्दु पर है, उनका अहम् सर्वांशतः द्रवित हो उठा है। उनके गीतों में आराध्य-आराधक का द्वैत तिरोहित हो उठा है। बस जिधर दृष्टि जाय, केवल वही, केवल वही है। किन्तु निराला का पौरुष-दीप्त अहम् इस प्रभु लगन की कठिन आँच में भी पिघल नहीं सका। निराला शरण की कामना करते हैं, मुक्ति की आकांक्षा करते हैं, फिर भी अपने को इतना तुच्छ, इतना पाप पंकिल, इतना कल्मष आविल नहीं मानते, जिसके लिए उन्हें बार-बार अपने को डराना पड़े, अपनी भर्त्सना करनी पड़े। इसलिए तुलसी जहाँ आत्म-विलयन कर जाते हैं, वहाँ निराला अपने व्यक्तित्व-विन्दु को भी मिटने नहीं देते, भले ही वह विन्दु उस सिंधु के समक्ष परिमाणता में नगण्य ही क्यों न हो।

भक्ति और प्रपत्ति :—भक्ति और प्रपत्ति दोनों शब्द समानार्थवाची हैं। ईश्वर में परम अनुरक्ति को भक्ति कहते हैं, ऐसा पहले लिखा गया है। भगवद्रूप प्राप्य वस्तु की इच्छा रखने वाले उपायहीन व्यक्ति की पर्यवसायिनी निश्चयात्मिका बुद्धि ही प्रपत्ति है। अतः प्रपत्ति में उपायान्तरों या साधनों का सर्वथा त्याग निहित है, किन्तु भक्ति में साधन भी स्वीकृत हैं। प्रपत्ति भक्ति की वह चरम एवं

तल्लीनावस्था है जिसमें भक्त अपने को भगवान् की शरण में छोड़ देता है। प्रपत्ति दो प्रकार की होती है—(१) मार्जार-स्वरूपा (२) मर्कट स्वरूपा। मार्जार और मर्कट—दोनों के शिशु साथ रहते हैं, किन्तु जहाँ मार्जार स्वयं अपने बच्चे को पकड़े चलता है, वहां मर्कट के बच्चे उससे चिपके रहते हैं। प्रपत्ति की अ।क्षर्शावस्था तब होती है, जब भक्त सर्व धर्मों को छोड़कर उसकी शरण में पहुँच जाता है और वह सकल चिंताओं से मुक्त हो जाता है, उसकी चिन्ता स्वयं प्रभु करने लगता है।

प्रपत्ति के छः अंग माने गये हैं।

(१) आनुकूल्यसंकल्प
(२) प्रातिकूल्यवर्जन
(३) रक्षिव्यतीति विश्वास
(४) गोप्तृत्ववरण
(५) आत्मनिक्षेप
(६) कार्पण्य

(१) ईश्वराराधन के लिए आवश्यक है कि प्रभु के अनुकूल अपना आचरण किया जाय, जहाँ काम है, वहाँ राम नहीं, तहाँ कपट, छलछिद्र है वहाँ प्रभु का निवास कैसे सम्भव है? इसलिए भक्त शरणागति के पूर्व से ही तद्नुकूल आचरण करता है। देखें :—

हरि भजन करो भू-भार हरो,
भवसागर निज उद्धार तरो
गुरुजन की आशीष सीस धरो,
सन्मार्ग अभय होकर विचरो। (आराधना पद सं० ५१

(२) आनुकूल्य संकल्प के साथ ही प्रातिकूल्यवर्जन सम्बद्ध है। प्रपत्ति के बाधक जितने भी पदार्थ हैं सबको दूर से ही नमस्कार कर लेना चाहिए। निराला का कहना है—

जब ईश्वर ने एक से एक आर्तों, अनाथों, दीन-दलितों का रक्षण किया है तो वह निराला का नहीं करे, ऐसा सम्भव नहीं। यथा—

अशरण शरण राम,

काम के छवि धाम
ऋषि-मुनी मनो हंस
रवि-वंश-अवतंस
कर्मरत निश्शंस
पूरो मनस्काम। (आराधना पद सं० ४८)

(३) प्रभु को ही एक मात्र रक्षक चुनना गोप्तृत्ववरण है। संसार में जितने सगे सम्बन्धी हैं, वे कभी नहीं साथ देते, फिर रक्षा की आशा तो निराधार ही है। कवि कहता है—

वही चरण शरण बने।
कटे कलुष गहन घने
लगे हैं तुम्हीं से मन,
उर नूपुर मधुर-रणन
तुम्हारे अंजिर, आँगन
मंगल के गीत गाने।—(आराधना, पद सं० ६०)

(४) आत्मनिक्षेप में भक्त अपना सब कुछ प्रभु को मानता है।

तन, मन, धन वारे हैं
परम, रमण, पाप—शमन
स्थावर जङ्गम—जीवन
उद्दीपन, सन्दीपन,
सुनयन रतनारे हैं—(अर्चना, पद सं० ४६)

(५) अपने को तुच्छातितुच्छ अकिंचनाति-अकिंचन समझना कार्पण्य है; किन्तु निराला के गीतों में उनका यह रूप दृष्टिगत नहीं होता। यह विवाद-रहित है कि वह अनन्त, सर्वशक्तिसमर्थ, विराट् एवं वरेण्य है; किन्तु यह जीव भी बिल्कुल उपेक्षणीय एवं महत्व-शून्य नहीं। सिन्धु की सिंधुता सम्भव नहीं यदि बूंदों का अस्तित्व न हो। महादेवी के रहस्यात्मक गीतों में यह भाव देखा जा सकता है।

भक्ति और मुक्ति :—वैष्णव भक्तों ने कभी भी मुक्ति की आकांक्षा नहीं की, क्योंकि मोक्ष के उपरान्त भक्त और भगवान् का सम्बन्ध ही समाप्त हो जाता है। गोस्वामी तुलसीदास ने स्पष्टतः लिखा हैं।

'ते जाने हरि भगति सयाने। मुकुति निरादहिं भगति लुभाने।'

आधुनिक कवियों में मैथिलीशरण गुप्त तथा रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने भी मुक्ति

की अवहेलना की है, किन्तु निराला के भावपरक गीतों में मुक्ति का आग्रह दीखता है।

तरणि तार दो
खे-खेकर थके हाथ,
कोई भी नहीं साथ,
श्रम-सीकर-भरा माथ,
बीच—धार, ओ, —(अर्चना पद सं० ७२)

शिल्प योजना—निराला के भक्तिपरक गीतों में टेकयुक्त तथा टेकहीन दोनों प्रकार के पद हैं, किन्तु भक्त कवियों की तरह एक पाद पादाकुलक, शृंगार या चौपाई का टेक रूप में रखकर तथा रूप माला, सार, विधाता सरसी हरिगीतिका आदि के चरणों को अन्तरा की तरह प्रयुक्त कर गीतों का निर्माण नहीं किया है टेकहीन पद तुलसीदास के शताधिक हैं। जैसे :—

'तू दयालु दीन हौं, तू दानि हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप-पुंज हारी॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मोसों?
मो समान आरत नहिं आरति हर तोसों॥'

—विनय पत्रिका पद सं ७९

इस तरह निराला ने बारह मात्राओं के दस चरण सोलह मात्राओं के दस चरण, वीस मात्राओं के दस चरण, दस मात्राओं के दस चरण, सोलह मात्राओं के चौदह चरण, चौदह मात्राओं के चौदह चरण, दस मात्राओं के चौदह चरण, सोलह मात्राओं के बारह चरण, दस मात्राओं के सोलह चरण, बारह मात्राओं के चौदह चरण वाले टेकयुक्त पदों की रचना की है। ऐसे सममात्रिक चरणों की आवृत्ति वाले पद शरद ज्योत्स्ना की भाँति भक्त-मानस को आप्लुत-आप्यायित कर देते हैं।

यहाँ भक्त-कवियों से एक अन्तर और दर्शनीय है कि उन्होंने सममात्रिक चरणों की संख्या इतनी नहीं बढ़ायी है। जहाँ निराला एक गीत में सोलह पंक्तियाँ रखते हैं वहाँ तुलसी और सूर के आत्मपरक गीतों में आठ-दस पंक्तियाँ ही पर्याप्त हैं। छन्दों की प्रलंबता का प्रश्न जहाँ उठता है वहाँ भक्त कवि गीतों में लम्बे छन्दों का प्रयोग करते हैं। ऐसी बात नहीं कि भक्त कवियों के गीत बिलकुल कम मात्राओं वाले छन्द के नहीं हैं' फिर भी दंडकों का प्रयोग कम नहीं हुआ है छन्दों के चरण चाहे जितने भी एक गीत में हो उससे उतनी हानि नहीं होती

जितनी दीर्घ-प्रसारी छंदों से होती है। अधिक मात्रा वाले छंदों से समुचित गायन-प्रभाव उत्पन्न करना संभव नहीं। छन्द के मात्रा उच्चारण में ही गायक का दम फूलने लगता है, मीड़-मूर्च्छना उत्पन्न करने की गुञ्जाइश ही नहीं रहती।

टेकयुक्त पदों में भी निराला ने निरालापन दिखलाया है। ये टेकयुक्त पद भी विनय-पत्रिका या सूरसागर से विलकुल भिन्न प्रतीत होते हैं। नीचे कुछ पदों को देखें।

मेरी सेवा ग्रहण करो हे!
शुद्ध सत्व से क्षण-क्षण यह
काष्ठा से रहित शरीर भरो हे!

(आराधना, पद सं० २४)

तन, मन, धन वारे हैं
परम—रमण, पाप—शमन,
स्थावर—जङ्गम-जीवन,
उद्दीपन, सन्दीपन।
सुनयन रतनारे हैं।

(अर्चना पद सं० ४६)

ऐसे भी बहुत पद हैं जिनमें कवि का ध्यान टेकहीनता या टेकयुक्तता पर केन्द्रित न रहकर तालनियोजन पर रहता है। उदाहरण के लिए एक दो पद की कुछ पंक्तियाँ देखें :—

दो सदा सत्सङ्ग मुझको।
अनृत से पीछा छुटे,
तन हो अमृत का रंग,
अशन—व्यसन तुले हुए हों,
खुले अपने ढंग;
लगे तुमसे तन-वचन-मन
दूर रहे अनङ्ग।

(अर्चना पद सं० २१)

इसके अतिरिक्त चौथे प्रकार के भी कुछ पद लिखें हैं जिन्हें स्तोत्र-पद्धति वाले पद कहते हैं। ऐसे पद जगद्धर भट्ट की 'स्तुति कुसुमांजलि' तथा 'विनय-पत्रिका' में देखे जा सकते हैं।

इस प्रकार निराला ने भक्ति की अभिव्यक्ति के लिए नई विधियों एवं नई शैलियों का अन्वेषण किया है। गतानुगतिक पद्धतियों से भाव-संप्रेषण सम्भव नहीं होता, ऐसा तो पथ-निर्माता कवि ही जानता है।

इसलिए अन्त में हम निःसंकोच कह सकते हैं कि भक्तिपरक गीतों के सृजन में भी निराला ने अभूतपूर्व सफलता पायी है। आधुनिक विज्ञानवादी, शका संकुल, द्विधा-विजड़ित युग में शायद ही कोई हिन्दी का कवि मिले जिसमें निराला जैसी आस्तिकता एवं भक्तिपरकता देखी जाय। विनयवश निराला ने 'अर्चना' की प्रस्तावना में लिखा है—"रस सिद्ध की परताल कीजिएगा तो कहना होगा कि हिन्दी के भाषा-साहित्य में ज्ञानी और भक्त कवियों की पंक्ति की पंक्ति बैठी हुई है, जिनकी रचनाएँ साधारण जनों के जिह्वाग्र से अमृत की धारा वहा चुकी हैं, ऐसी अवस्था में लोकप्रियता की सफलता दुराशामात्र है।" किन्तु लोकप्रियता एवं रसनीयता की दृष्टि से निराला के भक्तिपरक गीत अनन्वित हैं।

× × ×

निराला की वेदना उस योद्धा की वेदना है जो विकराल, प्रतिकूल परिस्थितियों से जूझा है, उस कलाकार की वेदना है, जो अपने काव्य कानन के सुमनों के मृदु गन्ध पराग से इस द्वेष विष जर्जर संसार को सुरभित, प्रेमहरित, स्वच्छन्द करने का संकल्प लेकर ही आया था, उस भक्त की वेदना है जो आजीवन स्वधर्माचरण करता रहा है और अब सब कुछ प्रभु के चरणों में समर्पित कर मुक्त हो जाना चाहता है।

—प्रो० विष्णुकान्त शास्त्री

'निराला और नारी'

----सुशीला

हिमगिरि की विशालता, सागर की गंभीरता, रुद्र का आक्रोश, प्रलय का हाहाकार एवं नवनीत की सुकुमारता को लेकर जिस विलक्षण व्यक्तित्व का सृजन हुआ था, वह महाकवि निराला ही था। इस औढ़रदानी महाप्राण निराला का व्यक्तित्व वास्तव में निराला ही था। असाधारण असंगतियों से आछन्न घटाटोप में अपनी निर्बन्ध त्रिछुच्छप विखरने की हिम्मत निराला ही में थी। वह साक्षात् शिव थे जिन्होंने जीवन भर गरलपान किया। और वदले में अपने लिए कुछ भी नहीं माँगा। अल्पायु में उन पर जो बीती, उसे वे मन ही मन सह गए। उनके स्वाभिमानी अक्खड़ स्वभाव ने, उनके स्वतंत्र चिंतन ने, उनकी दानवीरता और फक्कड़पन ने, विरामहीन संघर्षमय जीवन की कटुता ने और स्नेह से लबालब हृदय ने उनके जीवन पथ को इतना दुरूह कर दिया था कि अपने अन्तिम चरण में आकर उनका मस्तिष्क एकवारगी हाहाकार कर उठा था। दीनों, पतितों के प्रति उनके मन में जो सहानुभूति थी, समाज की व्यवस्था के प्रति जो आक्रोश था, उसी की चरम परिणति उनके मस्तिष्क में इस रूप में हुई थी।

वहुमुखी प्रतिभा के धनी निराला ने किसी भी विषय को अछूता नहीं छोड़ा। और जिसे भी छुआ, उसमें अपने प्राण उँड़ेल कर रख दिए। रहस्यवादी व छायावादी कविताएँ हों, अथवा व्यंग्य-हास्य के छींटे, गद्य काव्य हों अथवा प्रहसन, निराला का जीवन-दर्शन सर्वत्र व्याप्त है। निराला का व्यक्तित्व जिस प्रकार वहुमुखी था उसी प्रकार उनका कृतित्व भी वहुमुखी है। 'भिक्षुक', 'विधवा', तोड़ती पत्थर मजदूरनी का चित्रण जिस कुशलता से इस कवि ने किया है, उसी लाघवता से 'राम की शक्ति पूजा' में शक्ति व शौर्य का प्रदर्शन भी किया है। एक ओर उन्होंने अपने गहन चिन्तन और आत्मा के गूढ़ सम्बन्धों पर प्रकाश डाला है तो दूसरी ओर परक कविताएँ लिखने में भी कमाल हासिल किया है! प्रकृति-प्रेम का चित्रण जिस सुन्दरता से इस कवि ने किया है उसी प्रवीनता से उसने नारी चित्रण भी किया है।

नारी-प्रधान चित्रण में निराला जी के वे गीत आते हैं, जिनमें शृंगार भावनाओं का मधुर प्रेम का, संयोग और वियोग का मूर्त्त चित्रण हुआ है। इन काव्य गीतों में युवा हृदय उन्मुक्त रूप से उल्लसित हुआ है। पर साथ ही कवि ने इस वात का भी ध्यान रक्खा है कि असमय से कहीं नारी का पूज्य स्वरूप

विकृत न हो जाये और यही भाव उन्हें अन्य रीतिकालीन कवियों से ऊपर उठा देता है।

निराला के जीवन में नारी सदैव छलना के रूप में ही आई। शैशव काल में ही मातृ-सुख से वंचित हो गये थे। माँ का वात्सल्य वे भरपूर नहीं पा सके। एक ओर माँ के स्नेह का अभाव, दूसरी ओर पिता का कटु-व्यवहार। इन दो विरोधी धाराओं में कवि का बाल सुलभ हृदय आर्त्तनाद कर उठा। स्वभाव में अक्खड़ता के बीज उसी समय से पड़ गये। लेकिन साथ ही ममता की मात्रा भी बढ़ गई थी। शायद यही कारण था कि वात्सल्य का भूखा हृदय बुढ़िया भिखारिणी के उन्हें 'बेटा' कहने पर द्रवित हो उठा था और भावुकता की लौ में वे 'किताब महल' से प्राप्त अपना सारा पारिश्रमिक उसे सौंप बैठे थे। निराला जैसा बेटा पाकर उनकी माँ भीख माँगे, यह उन्हें कैसे सह्य हो सकता था।

खाने की थाली सामने रखी है, मित्रगण समीप बैठे हैं, सहसा निराला को उस बुढ़िया का ध्यान हो आता है जिसने पिछली शाम को उनसे एक पैसा माँगा था और रिक्त जेब होने के कारण उसे वे खाना खिलाने का आश्वासन दे आये थे। बस फिर क्या था? एक हाथ में भोजन की थाली, दूसरे में पानी का लोटा, न किसी से कुछ कहना, न सुनना, चल दिये बाहर की ओर। मित्र गण हतप्रभ से। लौटे तो खाली थाली व लोटा, सौम्य मुख पर तृप्ति की अपरिमित ज्योति लेकर। आते ही लगे उस सरकार को कोसने, जो इतना भी ध्यान नहीं रख सकती कि कौन कहाँ बैठा भूखों मर रहा है।

"कचहरी के रंगीले बाबू, कॉलेज के अल्हड़ छोकरे, और मनचले राहगीर जिसकी एक बंकिम चितवन और भीनी मुस्कान पर कृतार्थ हुआ करते थे, वह एक गौरवर्ण किशोर वय की, गुलाबी गालों व पखलसी आँखों वाली" पानवाली थी। लेकिन निराला की पानवाली भी निराली ही थी। "लम्बाई में लगभग दो हाथ, पीठ में कूबड़, टूटे दाँतों की एक बुढ़िया की दूकान के पान व सिगरेट ही इन्हें पसन्द आते थे। और जब बुढ़िया मर गई तो कवि का उस चौराहे पर पान खाना ही छूट गया। उसके मरने से उन्हें जो मर्मान्तक व्यथा पहुँची थी उसी का प्रायश्चित उन्होंने इस रूप में किया था।

क्या निराला ने इस पानवाली बुढ़िया में, भिखारणी बुढ़िया में माँ का ही स्वरूप देखा था जिस कर्त्तव्य को वे अपने वास्तविक जीवन में नहीं कर पाये थे, उसी को अब वे मानस लोक में पूरा नहीं कर रहे थे? क्या माँ का अभाव वे इस

रूपों में नहीं खोज रहे थे ? उनकी कुंठाओं का ज्वार उमड़-उमड़ नहीं वह रहा था ? उनका पुत्र रूप धन्य हो उठा था।

माँ के स्नेहाभाव को उन्होंने पत्नी के सौन्दर्य में ढूँढ़ा, कब का स्नेह का भूखा मन पत्नी को पाकर हर्षमग्न हो गया। निराला की मनोहरा देवी कालिदास की विद्योत्तमा, तुलसी की रत्ना एवं राम की सीता के रूप में उनके हृदयासन पर विराजी। पर कब तक ? विकासोन्मुख स्नेह की परितृप्ति से पूर्व ही कवि को पत्नी का भी वियोग सहना पड़ा और कवि का प्रेम अनादि व शाश्वत प्रेम में परिणत हो गया। उनके प्रेम-भाव का लक्ष्य कहीं स्वकीया है तो कहीं परकीया, पर जो भी है, पुनीत है, प्रेरक है :—

"तेरे सहज रूप में रंग कर
झरे गान के मेरे निर्झर।"

'प्रिया से' नामक रचना में उपर्युक्त दो पंक्तियों में कवि ने प्रिया को अपने काव्य की प्रेरणा के रूप में स्वीकार किया है। 'गीतिका' के समर्पण में निराला ने अपनी स्वर्गीय पत्नी के सम्बन्ध में लिखा है कि उन्होंने इनके जड़ हाथों को अपने चेतन हाथ से उठा कर काव्य में दिव्य शृंगार की पूर्ति करवाई।"

कवि का प्रियतमा के प्रति प्रेम मुखरता की अपेक्षा मौन अधिक पसन्द करता है। तभी तो मिलन के क्षणों में भी कवि मौन रहकर ही प्रेम को अधिक मधुर बना देता है।

बैठ ले कुछ देर,
आओ, एक पथ के पथिक से
मौन मधु हो जाये
भाषा मूकता की आड़ में।
मन सरलता की बाढ़ में
जल बिन्दु सा बह जाये।"

सम्पर्क स्थापित हो गया, दोनों एक दूसरे के निकट आ गये यही क्या कम है ? इसी को कहते हैं प्रेम में शालीनता का निर्वाह।

'रेखा' में प्रेम के उदय, विकास एवं प्राप्ति की कहानी कही गई है। यहाँ कवि का सामान्य भाव अनन्यता की ओर बह गया है। एक बात और प्रेम से बड़ा कोई नहीं। सारी सृष्टि ही प्रेममय है। और सच्चे प्रेम की कसौटी यही है कि उसमें वर्ण, जाति, रूप धर्म का कोई बन्धन न हो।

दोनों हम भिन्न वर्ण
भिन्न जाति, भिन्न रूप
भिन्न धर्म-भाव, पर
केवल अपनाव से, प्राणों से एक थे।
किन्तु दिन रात का
जल और पृथ्वी का
भिन्न सौन्दर्य से बन्धन स्वर्गीय है।

—'प्रेयसी से'

प्रेम की यही तो पराकाष्ठा है। निराला जी की नारी में सौन्दर्य और आकर्षण तो है ही, अनन्यता, अनुनय, प्रतीक्षा और समपर्ण का भाव भी है। एक ओर अगाध तृप्ति है तो दूसरी ओर विवशता की छटपटाहट अनुभव करती हुई कुंठालीन विरहिनी भी है। अन्त में यही भाव एक महती प्रेरणा के रूप में शेष रह जाता है।

'तुलसीदास की रत्नावली को उन्होंने सरस्वती सी प्रवुद्ध करने वाली शक्ति के रूप में लिया है। छायावादी युग में नारी रूप ऐसी व्याख्या अन्यत्र दुर्लभ है। उसमें एक ओर घोर विलासिता के भाव हैं तो दूसरी ओर उसमें पति को युगद्रष्टा बनाने का संकल्प भी है। निराला जी ने नारी के इन दो रूपों को प्रदर्शित कर नारी को सम्मान तो दिया ही है, पुरूप को भी अधिक प्रवुद्ध वनाने का प्रयास किया है।

यह तो हुआ निराला के काव्य की नारी का रूप दर्शन। अब उनके कथा-साहित्य को लीजिए। यहाँ भी निराला के हाथों में पड़कर नारी-पात्र अधिक सजीव, मोहक व प्रेरणास्पद बन गया है। उनकी स्त्री-पात्रों के व्यक्तित्व में भारतीय नारी के सभी गुण विद्यमान है। एक सामान्य नारी की अपेक्षा वे अपने जिन गुणों के कारण अपना एक पृथक महत्व रखती हैं और लाखों के बीच भी पहिचानी जा सकती हैं वह है उनकी विद्रोही भावना और अन्यायों से लड़ने का अदम्य साहस। वे विद्रोह करती हैं समाज के वन्धनों के प्रति, चरित्र-हन्ताओं के प्रति और स्वयं अपनी विवशताओं के प्रति भी। अन्त में अपनी चरित्र-दृढ़ता से वे पाठकों के मन पर एक अमिट छाप छोड़ जाती है। वे संकटों का सामना कर सकती हैं, पर अपने आदर्शों से विमुख नहीं हो सकती। नारी की इस असहायता में भी उसकी सवलता के दर्शन कराना निराला का ध्येय रहा है। समाज के

संत्रासों के प्रति यह विद्रोही भावना, संकटों से जूझते रह कर भी मस्तक ऊँचा किये रहना, स्वयं हलाहल पान कर औरों को अमृतदान करते रहना स्वयं कथाकार एवं कवि निराला की अपनी विशेषताएँ रही हैं और यही विशेषता उनके नारी पात्रों में अधिक सजीव हो उठी हैं।

निराला सर्वत्र नारी-स्वतंत्रता के हामी रहे हैं। प्रेरक शक्ति को बन्धनों में रखा भी कैसे जा सकता है? भारतीय नारियों की महिमा से वे भली भाँति परिचित हैं। पंचवटी-प्रसंग में कवि ने सीता को शक्ति रूप में तो देखा ही है, लोक भूमि पर भी वह कह उठता है—

"नारियों की महिमा-सतियों की गुण-गरिमा में, जिनके समान जिन्हें छोड़ कोई और नहीं माता हैं मेरी वे।"

निराला की प्रगतिशीलता उनकी मानवता की पर्याय है। नारी के रूप में उन्होंने मानवता का मनोहारी रूप देखा है। 'अर्चना' गीत की कुछ पंक्तियाँ देखिए—

मां अपने आलोक निखारो,
नर को नरक-त्रास से वारो।
विपुला दिशावधि शून्य वर्गजन,
व्याधि-शून्य जर्जर मानव-मन,
ज्ञान गगन से निर्जर जीवन,
करुणा करो, उतारो--तारो।"

इनमें कवि ने नारी को मातृ रूप में चित्रित कर उसकी आलोकदात्री और त्रासहारिणी के रूप में प्रार्थना की है।

जिन व्यक्तिगत भावनाओं की अभिव्यक्ति वास्तविक जगत में नहीं हो पाती थी और जिन्हें महाकवि अपने कल्पना-लोक में ही देखा करते थे उनका सजीव चित्रण 'सरोज-स्मृति', 'राम की शक्ति पूजा', एवं 'तुलसीदास' में हुआ है। इसमें नारी का जो स्वस्थ, सबल एवं उज्ज्वल स्वरूप चित्रित हुआ है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। 'सरोज-स्मृति' में एक भावुक व्यथित पिता का दयनीय हृदय बोल-बोल पड़ता है। पिता का दायित्व अपूर्ण ही रहा, यह कसक कवि को अन्त तक सालती रही। इस पीड़ा का शूल अधिक न सह सकने के कारण कवि कह उठता है।

अस्तु मैं उपार्जन को अक्षम।
कर सका नहीं पोषण उत्तम।
....

धन्ये, मैं पिता निरर्थक था।

अपनी पत्नी की धरोहर को वह सुरक्षित नहीं रख सके, यही मर्मान्तक व्यथा उन्हें धिक्कारती सी लगती है।

वास्तव में 'सरोज-स्मृति' निराला की करुणा की सहज अभिव्यक्ति, है। एक मौन, नीरव, निस्पन्द एवं सकरुण अभिव्यक्ति, जिसकी कोई थाह नहीं।

निराला पहले दार्शनिक हैं, फिर कवि। अतः नारी-चित्रण पर भी दार्शनिकता की अमिट छाप है। पुत्र, पति एवं पिता के रूप में कवि ने माँ, पत्नी एवं पुत्री का स्नेह एवं सुख खोकर हिन्दी-साहित्य को जो उपलब्ध किया है वह अपने में महान् है, अनुकरणीय है।

———

निराला अक्षय प्रतिभा की साकार प्रतिमा

—अनाम जैतली

एल-५/ए विश्वविद्यालय आवास जयपुर-४ (राज)

निराला हिन्दी साहित्य के उन मूर्धन्य कवियों में से थे जिन्होंने अपनी प्रतिभा से साहित्य को एक नई दिशा दी। निराला जब तक जिये, विद्रोही बन कर जिये। उन्होंने कभी भी यथास्थितिवाद का सहारा नहीं लिया। वे हमेशा 'बेहतर' के लिए जूझते रहे। उनमें संघर्ष करने की अद्भुत क्षमता थी। अपनी इस क्षमता से ही वे पूरी जिन्दगी सामाजिक रूढ़ियों व प्रतिक्रियावादी शक्तियों का विरोध करते रहे। इस संघर्ष के परिणाम स्वरूप उन्होंने अपने को मिटा दिया परन्तु अस्तित्व प्राप्त सामाजिक स्थितियों तथा 'व्यवस्था' से कभी समझौता नहीं किया। उनकी इसी विद्रोही प्रवृत्ति ने नए खून को उनकी ओर आकर्षित किया और नई पीढ़ी ने एक राय से उन्हें अपना अनुभवी नेता मान लिया। निराला के कुशल नेतृत्व के फलस्वरूप ही प्रगतिवाद का आन्दोलन अपनी मंजिल तय कर सका।

निराला काव्य को मुक्तछंद में ढालने के इच्छुक थे। उन्होंने काव्य की धारा में रोड़े बिछाने की प्रवृत्ति का विरोध किया। इसी का ही यह परिणाम था कि काव्य तुकबंदी की लीक छोड़कर मुक्तछंद की ओर बढ़ा और इस प्रकार उसकी अभिव्यक्ति में प्रामाणिकता आई। मुक्तछंद से तात्पर्य उनकी दृष्टि में छंद से मुक्ति नहीं था बल्कि छंद के एक ऐसे मूलभूत स्वच्छंद बंधनहीन रूप से था जिससे भाव-प्रवाह में किसी प्रकार का व्यवधान न उपस्थित हो। इस स्थल पर मुक्तछंद से सम्बन्धित निराला का स्वयं का विचार देना उपयुक्त होगा। मुक्तछंद की आवश्यकता व उसका अर्थ स्पष्ट करते हुए निराला जी ने लिखा था—"मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है। मनुष्यों की मुक्ति कर्मों के बन्धन से छुटकारा पाना है और कविता की मुक्ति छंदों के शासन से अलग हो जाना। मुक्त काव्य साहित्य के लिए अनर्थकारी नहीं होता किन्तु उससे साहित्य में एक प्रकार की स्वाधीन चेतना फैलती है जो साहित्य के कल्याण की मूल होती है।

मुक्तछंद तो वह है जो छंद की भूमिका में रहकर भी मुक्त है......... मुक्त छंद का समर्थक उसका प्रवाह है; वही उसे छंद सिद्ध करता है और उसका नियम-साहित्य उसकी मुक्ति।" ('परिमल' की भूमिका से)

मुक्तछंद परम्परा का प्रारम्भ सर्वप्रथम निराला जी की १९१६ की रचना 'जूही की कली' से हुआ है। 'परिमल' में मुक्तछंद के प्रयोग की स्थितियाँ और

अधिक स्पष्ट हुई हैं जिसमें तीन खण्डों में सममात्रिक, विषममात्रिक, सान्त्यानुप्रास तथा पूर्ण मुक्त रचनाओं के उदाहरण हैं।

इसके अतिरिक्त निराला के प्रयासों से हिन्दी साहित्य अन्य दृष्टियों से भी प्रतिष्ठित हुआ है। निराला ने हिन्दी कविता में उर्दू की गजलों और बहरों को ढाला और एक ऐसी शैली का निर्माण किया जिसमें ठेठ ग्रामीण और मुहावरे युक्त भाषा को प्रधानता मिली। 'बेला' व 'नए पत्ते' इसके अच्छे उदाहरण हैं। निराला ने 'भाव' और 'भाषा' दोनों दृष्टियों से काव्य में 'सेक्युलराईजेशन' प्रस्तुत किया है। उन्होंने अपने देवतावाद के निर्माण में अहंकृत्ति को प्रकृतिस्थ करके उसे आकृति दी है। पाश्चात्य जगत् में किर्केगार्द और रिल्के ने जिस अध्यात्म का समाजीकरण किया, हिन्दी साहित्य में उसकी शुरुआत सर्वप्रथम महाकवि निराला ने की।

निराला की काव्य शैली में विविधता सहज ही अनुभव की जा सकती है। मूलतः निराला की शैली में ओज व उदात्तता है। यह ओज 'तुलसीदास' व 'राम की शक्ति पूजा' में सहज ही देखा जा सकता है। जहाँ तुलसीदास' के प्रारम्भिक अंशों, 'छत्रपति शिवाजी का पत्र' 'आवाहन' व 'सहस्त्राब्दि' में भावना का ओज है, वहीं 'बादलराग' में नाद का मंद गाम्भीर्य। इतना ही नहीं निराला की हास्यशैली भी काफी विकसित थी और इसका सहज अनुमान उनकी कृतियों 'गर्म पकौड़ी' व 'कुकुरमुत्ता' देखकर लगाया जा सकता है। 'कुकुरमुत्ता' के माध्यम से उन्होंने सामाजिक कुरीतियों व विसंगतियों पर तीव्र प्रहार किया है।

निराला अपने समय के युग की जटिलताओं से अच्छी तरह परिचित थे। इसका मुख्य कारण उनका व्यापक व गहन 'आधुनिक बोध' था। यह एक तथ्य है कि जिस कवि का आधुनिक बोध जितना गहरा और व्यापक होगा वह युग की जटिलताओं को उतनी ही गहराई में पकड़ सकेगा। यही कारण है कि निराला के काव्य में जीवन के किसी एक पक्ष का ही प्रतिनिधित्व नहीं है बल्कि उसमें समग्र जीवन चित्रित हुआ है। यहाँ डा० बच्चन सिंह का यह कथन तर्कसंगत लगता है कि 'निराला का आधुनिक बोध इतना पूर्ण व समग्र है कि उनके काव्य में जीवन की विविध छवियाँ सहज में ही उकेरित हो उठी हैं। यह वैविध्य अपने औदात्य और रंगीनी में अप्रतिम है। पूरे आधुनिक काव्य में इतने रंग-रूपों-भरी जीवन्त कविता किसी एक कवि ने नहीं दी। इसका मुख्य कारण है उनका जीवनगत तनाव। निराला का सम्पूर्ण काव्य यथार्थ से जुड़ा हुआ है। उसमें स्वप्नों का रूमानीपन नहीं है निराला ने मात्र लिखने के लिए नहीं लिखा, उन्होंने जो कुछ महसूस किया

उसे उनके सच्चे रूप में ही ढाल कर प्रस्तुत किया। यही कारण है कि उनकी कृतियों में सच्ची अनुभूति की प्रामाणिकता दृष्टिगत होती है।

निराला जी के सम्पूर्ण काव्य में अधिकतर आशावादी स्थल ही देखने को मिलते हैं। यद्यपि कहीं-कहीं विपद् के क्षण भी दिखाई दिए हैं पर उसका पर्यवसान दार्शनिकता की केन्द्रगत भावना में हुआ है :—

"देख चुका जो-जो आए थे
चले गए,

....

मैं ही क्या सब ही तो ऐसे
छले गए।
मेरे प्रिय सब बुरे गए सब भले गए।"

वैसे निराला में जीने की, जिन्दगी से डट कर टक्कर लेने की, उसकी चुनौतियाँ स्वीकार करने की अदम्य इच्छा थी—

"अभी न होगा मेरा अंत,
अभी-अभी तो आया है मेरे जीवन में मृदुल वसंत।"

निराला पूंजीवाद व आर्थिक विषमता के विरोधी थे। उक्त व्यवस्था में वे अविलम्ब परिवर्तन के भी इच्छुक थे—

"जल्द-जल्द पैर बढ़ाओ, आओ-आओ
आज अमीरों की हवेली
किसानों की होगी पाठशाला
धोबी, पासी, चमार, तेली
खोलेंगे अंधेरे का ताला
एक पाठ पढ़ेंगे, टाट बिछाओ" (बेला)

निराला की काव्य रचनाओं में 'तुलसीदास' व 'राम की शक्ति पूजा' का विशिष्ट स्थान है। निस्संदेह यह दोनों कृतियाँ निराला की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कृतियों में से हैं। 'राम की शक्ति पूजा' पाश्चात्य महाकाव्यों का स्मरण कराती है। डा० राम विलास शर्मा उसे मिल्टन के 'Paradise Lost' के करीब पाते हैं। उनके अनुसार "छंद का गठन भाषा का ओजपूर्ण किन्तु संयमित प्रवाह साथ ही भावों की असाधारण गरिमा—ये गुण हमें मिल्टन के काव्य में मिलते हैं। 'राम की शक्ति पूजा' महाकाव्य नहीं है, खण्ड काव्य भी नहीं, वह एक लम्बी

कविता है, परन्तु उसमें ये सभी गुण वर्त्तमान हैं।"

डा० बच्चन सिंह ने बड़े ही सुन्दर ढंग से संघर्ष की चिरन्तनता को लेकर उसकी व्याख्या प्रस्तुत की है। उनके अनुसार "राम-रावण के युद्ध को इसमें 'न भूतो न भविष्यति' नहीं कहा गया है। बल्कि युद्ध की पीठिका पर घोर अंतर्मंथन को बड़ी ही सशक्त वाणी दी गई है। राम, रावण और उनका युद्ध तीनों प्रतीक हैं। यह युद्ध जीवन और जगत् में बराबर चलता रहता है, मनुष्य के अंतर्जगत् में चलने वाले इस युद्ध की विभीषिका कम उद्वेगजनक नहीं होती। यह युद्ध सामयिक भी है, सनातन भी। परिस्थिति विशेष में इसके रूपाकार में भेद हो सकता है पर मूल भूत तत्त्व-युद्ध वही रहता है। रावण असामाजिक, असांस्कृतिक अधार्मिक (इसे व्यापक अर्थ में प्रयुक्त किया जा रहा है) वर्ग या मनोवृत्ति का प्रतीक है तो राम उसके विपरीत वर्ग या मनोवृत्ति का। समाज और संस्कृति इनके द्वन्द्व से ही गत्यात्मक होते हैं।"

('राम की शक्ति पूजा, : एक नई व्याख्या लेख से)

वस्तुतः 'राम की शक्ति पूजा' की सबसे बड़ी विशेषता ही यही है कि उसमें कोई जटिल दर्शन नहीं है बल्कि इसमें वह सशक्त जीवन दर्शन है जो व्यक्ति को और उसके माध्यम से पूर्ण समाज को कुछ ठोस मूल्य प्रदान करता है। उसकी यह देन एक विराट् उपलब्धि बनकर प्रकट होती है।

निराला सिर्फ एक कवि ही नहीं वे एक सशक्त आलोचक, कथाकार व कहानीकार भी थे। निराला का आलोचनात्मक कार्य मुख्यतः महान् कवियों पर लिखी गई आलोचनाओं के जरिए देखा जा सकता है। उनकी आलोचनाओं का मूल आधार उनके चिंतन की सूक्ष्मता, मनन की गम्भीरता, अध्ययन की व्यापकता, विचार-स्वातंत्र्य व गम्भीरता था। इन विशेषताओं पर आधारित उनकी आलोचना काफी प्रखर होती थी। इस संदर्भ में श्री राम प्यारे मिश्र का यह कथन उल्लेखनीय है कि "उनकी आलोचनाओं के कशाघातों की प्रताड़ना ऊँचे तबके के राष्ट्र सेवियों या सुविदित यशस्वी कवियों को भी सर्कस के व्याघ्र की भाँति निस्तेज बना देती थी।"

उनकी कहानियों में 'लिली', 'सखी' व 'चतुरी चमार' आदि उल्लेखनीय हैं। इन कथाओं के अतिरिक्त उनके दो रेखाचित्र 'कुल्ली भाट' तथा 'बिल्लेसुर बकरिहा' भी कम उल्लेखनीय नहीं हैं। निराला द्वारा लिखित निवन्ध संग्रहों में 'चाबुक' 'प्रबन्ध पद्म' तथा 'प्रबन्ध प्रतिमा' मुख्य है।

उपन्यास के क्षेत्र में भी निराला का योगदान काफी उल्लेखनीय है। उन्होंने

अस्तित्व प्राप्त सामाजिक परम्पराओं एवं तौर-तरीकों को अपने उपन्यासों । में स्थान दिया और उनके जरिए अपनी बात स्थापित की। उनके उपन्यासों में अप्सरा' 'अलका', प्रभावती', 'काले-कारनामे' आदि महत्त्वपूर्ण हैं। उनके उपन्यासों से सम्बन्धित श्री जगन्नाथ सेठ का यह कथन उचित है कि "निराला के उपन्यासों की भाव भूमि व्यापक है। इसमें व्यक्ति, समाज, राष्ट्र के सामाजिक और शाश्वत संवेदनों का स्पन्दन है। गाँवों के देश में ग्रामीण समाज का चित्रण स्वाभाविक ही है।

नगर-सभ्यता के प्रसार के कारण वहाँ का समाज भी निराला के उपन्यासों का विषय बना है। प्रणय और सौंदर्य के चित्रों में कोमल तूलिका से लेखक ने रंग भरे हैं और इसकी रूमानी भावना उपन्यासों के अंत में दो व्याकुल प्राणों को मिलन के मधुर मसृण सूत्र में पिरो देती है। राष्ट्रीयता का स्वर भी मुखर है। कथा की मूल धारा के साथ देश भक्ति की धारा मिलकर कथा की दिशा को मोड़ देती है।"

वस्तुतः निराला ने अपनी कविताओं की कमी को अपने गद्य-साहित्य के माध्यम से पूरा किया है। उनका गद्य साहित्य उनके काव्य के समान ही संघर्षों के बीच उनके अपराजेय व्यक्तित्व का प्रतिविम्व है। निराला का गद्य साहित्य राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक, धार्मिक हर तरह के अन्याय मनमानी के विरुद्ध चुनौती प्रस्तुत करता है। कविता की भाँति उसमें उतनी कठिन अभि-व्यक्ति नहीं है। उसकी अभिव्यक्ति काफी सहज है और यह सहजता निराला को जानने में बड़ी सहायक सिद्ध होती है। यदि निराला का गद्य साहित्य न होता तो हिन्दी का खजाना काफी खाली रह जाता, उसको सम्पन्न कह पाना कठिन लगता।

वास्तव में निराला बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उन्होंने साहित्य के मात्र काव्य पक्ष को ही नहीं संवारा, उन्होंने उसके कथा व आलोचना पक्ष के साथ भी पर्याप्त न्याय किया। निराला ने झूठे बुद्धिवादियों के भ्रम को तोड़ कर एक ऐसा विकल्प प्रस्तुत किया जिसके परिणामस्वरूप बुद्धिजीवी व साधारण व्यक्ति के वीच सम्पर्क स्थापित हो सका। दोनों वर्ग एक दूसरे के समीप आए, उन्हें एक दूसरे को जानने-समझने का अवसर मिला, दोनों ने एक दूसरे से निस्संकोच सीखा और परिणाम स्वरूप दोनों एक जुट हो समाज-निर्माण में लग गए। निराला 'रचनात्मक विध्वंस' में विश्वास रखते थे। 'रचनात्मक विध्वंस' की आवश्यकता

आज के युग में और अधिक हो गई हैं जबकि समाज का प्रत्येक वर्ग सामाजिक परिवर्तन का इच्छुक है। सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में 'रचनात्मक विध्वंस' लाभदायक सिद्ध हो सकता है क्योंकि वह किसी धर्मोपदेशक का धर्मोपदेश नहीं है बल्कि वह सर्वमान्य विद्रोही व कार्यशील व्यक्ति का अमोघ अस्त्र रहा है। यह 'रचनात्मक विध्वंस' के विषय में गम्भीरता से विचार करना आवश्यक हो जाता है।

इस क्षेत्र में निराला की तुलना कबीर से की जा सकती है। कबीर की भाँति निराला भी उस बात को मानने के लिए सदैव तत्पर रहते थे जो तर्क की तुला पर ठीक उतरती थी। वह अंध-विश्वासी नहीं थे, आत्म-विश्वासी थे। शरीर की विशालता के साथ-साथ उनका दिल और दिमाग भी विशाल था। वह कोई कार्य छुप कर करना नहीं पसन्द करते थे, सब कुछ खुले रूप में स्वीकारना और करना ही उन्हें अभीष्ट था। उनका यह साफ व्यवहार उनके व्यक्तित्व के मूल्यांकन में सहायक हुआ है। किसी ने भी उन्हें अंदर व बाहर से अलग नहीं पाया, सदैव एक जैसा ही पाया है। यदि यह प्रवृत्ति निराला के बाद भी पनपती और इसको प्रश्रय मिलता रहता तो वर्तमान साहित्यिक अनाचार नहीं पनपता और साहित्य के द्वारा सामाजिक चेतना के प्रसार का गुरुतर उत्तरदायित्व अवश्य पूर्ण होता। इसके लिए वर्त्तमान आत्मप्रवंचक प्रवृत्तियों को ही दोषी ठहराना सही प्रतीत होता है।

———

'जीवन्तता के लिये प्रतिबद्ध-निराला'

----सुशील सिन्हा

कदाचित् साहित्य का अप्रतिम महत्त्व व्यक्ति के जीवन और उसके आदर्शों, यथार्थों और आह्वानों में तारतम्य स्थापित करने में है। बल्कि तारतम्य शब्द भी अधिक उपयुक्त नहीं प्रतीत होता। कहना चाहिए व्यक्तित्व तथा कृतित्व में सामंजस्य और तिरोभाव हो जाये अर्थात् स्थूलतः कथनी करनी में अन्तर ही न रक्खा जाये, कथनी कुछ रहे ही नहीं करनी ही प्रतिनिधि बोधक सिद्ध हो। साहित्य को व्यक्ति और समाज का दर्पण कहा गया। मैं समझता हूँ साहित्य व्यक्ति का सरक्षक और प्रणेता भी होता है। वैसे देखने में उसका सर्जक मानव ही प्रकट रूप से प्रणेता होता है। परन्तु साहित्य, इतिहास, धर्म, संस्कृति और अन्य मानव जीवन सम्बन्धी विधायें आने वाली पीढ़ियों के लिये चिन्तन-मनन के पर्याय होती हैं। व्यक्ति अतीतोन्मुखी न होकर इन सब जीवन विधाओं के माध्यम से भविष्य के लिये वर्त्तमान का नितनूतन प्रगति मूलक उपयोग कर सके इससे बड़ा साहित्य का अभीष्ट और क्या हो सकता है? परन्तु हुआ अधिक यह है कि 'साहित्य साहित्य के लिये' सिद्धान्त पर साहित्य को मात्र दर्पण बना रक्खा गया, जीवन के असंभावित जोखिमों और प्राणान्तक आह्वानों के समक्ष व्यक्ति स्थिर न रह सका फलतः साहित्य समसामयिकता के पटल पर भी खरा नहीं उतर पाया। अधिकांश साहित्य प्रशंसात्मक अथवा प्रतिबिम्बक ही रचा गया, प्रेरक, उद्बोधक या युगान्तरकारी उद्भूत न हो पाया। संतोष की बात हैं कि समय की करवट से असंभावित रूप से हर तथ्य परिवर्धित-संवद्धित हुआ है और आज साहित्य भी सर्वथा नवीन आयामों में प्रवृष्ट हो चुका है। इस प्रतिक्रिया के लक्षण निश्चय ही अभिवृद्धि के सूचक हैं।

व्यक्ति और उसकी जीवन विधाओं को जीवन्त एवं दर्शन उदात्त बनाने में युग-प्रवर्त्तक सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का योगदान विशिष्ट रहा। स्थूल और सूक्ष्म के मध्य गमन-प्रत्यागमन ने विविधकालावधियों में विभिन्न विचारधाराओं को जन्म दिया। कभी निराकार साकार आराधन का महत्व रहा, कभी सकंटापन्न आरोहों-अवरोहों में शक्ति और व्यक्ति-पूजक प्रवृत्तिका विकास हुआ तो कभी व्यक्ति, सत्ता, निर्माण और व्यवस्था के प्रति घृणा उत्पन्न हुई और कभी सृष्टि के प्रति प्रेम और उत्तरदायित्व की भावना जागी। कालाक्षेप अनुसार हर आने वाला समय नवीन लगा। घुमा फिरा कर या सोच-निश्चय कर पुराने माध्यमों को नये संदर्भों में आंकना नयापन लगा और वह नवीन स्थापना विगत से अलग करके अवमानी गई।

सहज मानवीयता किसी तत्कालीन सुविधाजनक स्वीकृति को परम्परा बना लेने की रहती है। परन्तु एक स्वीकृति दूसरी परिस्थिति के लिये अवरोधक तथा घातक बनती है। सहज रूप में प्रवृत्तियां समान होने पर भी अनुभव, संस्कार और क्षमता अनुसार व्यक्ति-व्यक्ति और समय-समय में अन्तर हुआ करता है। सुविधा को सर्व सामयिक और परिस्थितिसिद्ध नहीं माना जा सकता क्योंकि स्वीकृति में कहीं निष्क्रियता तथा समर्पण की गन्ध अवश्य निहित रहती है। जीवन में नित्य नये चरण और उन चरणों के शाश्वत चिह्न कृतियों अथवा कथ्यों में भी प्रतिविम्बित हों इसलिये आवश्यक होता है विम्ब अर्थात मनुष्य सुनिर्दिष्ट, सम्बद्ध और आत्म निर्मोही हो, यह प्रथम अनिवार्यता होती है।

विभिन्न मतावलम्वों और फतवों में इस कथ्य को तथ्य रूप में स्वीकार नहीं किया जाता। प्रायः पर उपदेश या जीवन की कटुताओं और यथार्थों को निरीह दृष्टि से देख कर जनचेतना को सीमित समझ लिया जाता है जो कि असंगत है। मूल और सहज प्रवृत्ति अनुसार किसी भी व्यक्ति के यथार्थ और कथित या मान्य रूप पर हरेक का ध्यान जाता है। कटुतायें तो किसी सीमा तक क्षम्य अथवा अविचारित हो सकती हैं परन्तु एक बुद्धिजीवी समाज की इकाई से स्वेच्छित और व्यामोही जीवन व्यतीत करने को उसके जीवन्त-संवेदनों (साहित्य, कला, संगीत आदि) से अलग नहीं माना जा सकता। समय हमारी अपनी पकड़ से कितना मुक्त रहता है इसका अनुमान या विश्वास हम कर ही नहीं पाते। आज भी साहित्य को प्राणवान जीवन और उसके अंगों को दर्पण जैसा संवेदनशील नहीं माना जाता। व्यक्ति का अपना संघर्ष, निर्माण और यथार्थ ही सबसे बड़ी पूंजी, स्मृति और महत्व की वस्तु होती है। यह नहीं कि उसका परिचय क्या था, उसने मात्र क्या कहा, क्या लिखा, क्या व्यक्त किया या उसके उद्देश्य और आदर्श कितने ऊंचे थे, किस वर्ग, प्रकार, कोटि और प्रचार की वस्तु उसने प्रदान की? क्योंकि वस्तु के साथ वस्तुकार का परिचय अभिन्न रूप से जुड़ा रहता है भले ही महत्व व्यक्ति और उसके कृतित्व को अलग दिया जाता रहे। सर्वसामान्य रूप से किसी व्यक्ति में भीतर और बाहर, [illegible] और अव्यक्त, कथ्य अथवा लिखित और कर्म एवं व्यवहार में कितनी ए[illegible] ही मैं समझता हूँ यही तथ्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है।

[illegible] र पर साहित्यिक-परिवेश में इनी-गिनी विभूतियाँ ही खरी मिलेंगी [illegible] की कृतियाँ खरी रहीं तो जीवन जैसा-तैसा उधार लिया सा रहा, [illegible] भरा रहा तो कृतियों की अपेक्षा शांत संयमित और संतुष्टि-

मयकी की गई। कहा भी जाता है साहित्यकार का व्यक्तित्व कृतियों में न झलके जबकि यह असंभव ही है। यह तो कई रूपों में जीवित रहने और अभिनय करने जैसी बात हुई। इतना वाङ्मय अनुभूत करने का कारण व्यक्ति विशेष के सम्यक् आकलन है जिसके बिना सारा चिन्तन, लेखन, प्रभाव सभी कुछ निरर्थक लगता है। किसी व्यक्ति ने जीवन को जीवन्त रूप में जिया भी या प्रयत्न भर किया या आकांक्षा ही व्यक्त की या जितना भी जीवन प्राप्त किया उसे ठोस और पूर्ण बनाया। इसीलिये मैं यह मानना चाहता हूँ निराला एक समर्थ, पूर्ण और संघर्षशील व्यक्ति था या नहीं उसकी कृतियों ने तो उसके इस महत्व में बहुत थोड़ा सा योगदान किया होगा क्योंकि कृतियों में भी विधा, विषय, प्रवृत्ति और उद्देश्य की एक सीमा रहती है। निराला के व्यक्तित्व और कृतित्व से भी कुछ न कुछ परिचय रहा करता है परन्तु उसमें किस ओर बल दिया जाता है यह प्रमुख बात है।'

हर व्यक्ति का जीवन स्थूल या सूक्ष्म रूप से उसके पूर्ववर्त्ती विभिन्न परिवेशों से बड़ा होता है। पूर्ववर्त्ती प्रभाव वर्त्तमान को न तो पूरी तरह सम्पृक्त रूप से समझने देता है न भविष्य की भूमिका बनने देता है। बीते को वर्त्तमान से जोड़े रखने का संस्कार नये मानव को किस रूप में पुष्ट-पूर्ण करता है यह समझ से परे की बात है बस! आतंक यही छाया रहता है कि यदि व्यक्ति अतीत से अलग हुआ तो स्थित नहीं रह पायेगा इसीलिये सामान्य तथा हर व्यक्ति अतीत के लिये वर्त्तमान में जिया करता है। जो उसकी जन्मजात हीनता और झुठलाहट बन जाता है। जिस व्यक्ति के ऊपर परिस्थितियों का दबाव जितना पड़ता है वह उतना ही समीचीन हो उठता है। निराला ने निपट व्यक्ति के रूप में अपना जितना जीवन जिया उतना कटु और संघर्षरत जीवन उन्होंने अपनी कृतियों के माध्यम से नहीं जिया। उसका कारण था अपने तत्कालीन सामाजिक तथा साहित्यिक आयामों को विच्छिन्न कर पाना सरल न था। यथार्थ और आदर्शवाद का संघर्ष आरंभ हो चुका था। स्वयं निराला ने छायावाद के स्तंभ कवि के रूप में अपना स्थान बनाया परन्तु शीघ्र ही उन्हें छायावाद के ह्रासोन्मुख इंगितों का भास होने लगा था इसीलिये वे तत्कालीनता से पृथक होकर प्रगतिशीलता की ओर प्रवृत्त हुए। उनकी 'बेला' 'नये पत्ते' आदि कविताओं ने युग प्रवर्तन किया। भाव, भाषा, शैली व रचना विधान सभी दृष्टि विन्दुओं से निराला ने नये सृजन के सूत्र अंकित किये। 'जूही की कली' और 'कुकरमुत्ता' तो आक्रोश के ठेठ रंग में रंगी आन्दोलनकारी रचनायें थीं। गद्य विधा में भी उन्होंने 'कुल्लीभाट', 'बिल्लेसुर-बकरिहा', 'चोटी की पकड़'

आदि उपन्यासों द्वारा अपने विद्रोही जीवन दर्शन का परिचय दिया। खंडित विश्वासों और हताश प्रेरणाओं के युग का यथार्थ चित्रण 'बिल्लेसुर बकरिहा' में हुआ है। एक सहज सामान्य व्यक्ति कब तक और किस भरोसे पर निर्भर रहे सभी तो व्यंग्य भरे छलावे हुआ करते हैं। अपने इर्द-गिर्द के समाज से क्षुब्ध बिल्लेसुर गाँव वालों के नाम पर अपनी बकरियों के नाम रखते हैं। मानवीय सामर्थ्य तब धैर्य तोड़ बैठती है जब आदमी अन्तिम रूप से परमब्रह्म का आसरा लगाता है परन्तु उसे अपने परम आराध्य हनुमान जी की मूर्ति पर प्रहार करना कितना आत्म-विदारक लगता है। परन्तु मनुष्य खंडित हो रहा था, ढह रहा था, उसकी क्षुब्धता सीमा तोड़ रही थी। उस संक्रान्ति में आवश्यकता थी व्यक्ति में आंतरिक दृढ़ता स्थापित रक्खी जाये। 'निराला' के 'राम की शक्ति पूजा' काव्य का आधार आंतरिक एकाग्रता और आत्मलीनता ही है। इसमें अभिव्यंजना उत्कर्षमय सौष्ठव को प्राप्त हुई है इस कृति के अनुस्यूत युगीन चेतना तथा मानव मूल्यों का उद्घाटन बड़े व्यापक धरातल पर मानव को प्रबोधित करता है। हिन्दुओं के परम आराध्य एवं श्रद्धेय मर्यादा पुरुषोत्तम को एक सामान्य व्यक्ति की भाँति उद्विग्न, खंडित और आत्म-व्यक्त स्थिति में दर्शाया गया और उसी एक सामान्य इकाई रूप में वे एकाग्र केन्द्रित हो अंत में शक्ति प्रसूत हो जाते हैं। 'निराला' जानते थे कि जब तक बहुत ही सामान्य धरातल पर सहज संभाव्य स्थिति में कोई बात नहीं उठाई जायेगी तब तक वह सर्व सामान्य का स्पर्श नहीं कर सकती सबके अन्तस् में वह बैठ नहीं सकती। तत्कालीन यथार्थता पर आधारित ही निवेदन ग्राह्य होगा। समाज में व्याप्त घनीभूत निराशा और आक्रोश की भावभूमि से आरंभ होकर यह काव्य आंतरिक हीनताओं पर विजय प्राप्त करता, आंतरिक दृढ़ता के आ जाने पर बाह्य अवरोधों व हताशाओं को निर्मूल करता अंत में विश्वास को सफल सिद्ध कराता है। पूर्व ग्रन्थों वाल्मीकीय रामायण और गोस्वामी तुलसीदास कृत 'राम चरित-मानस' में भी राम द्वारा सम्पन्न किसी शक्ति पूजा का कोई उल्लेख नहीं मिलता। सर्वथा नवीन कल्पना के आधार पर मानवीय अनुभूतियों को पुंजीभूत इकाई के रूप में समाहृत करने के कारण निराला की इस काव्य रचना का अनूठा महत्व है। इस आधार का सूत्र 'निराला' ने किसी न किसी ग्रन्थ-कथा से अवश्य खोजा होगा। सूत्रान्वेषण हेतु तीन संभावनायें व्यक्त की गई हैं। पहली तो देवी भागवत का वह कथास्थल हो सकती है जहाँ रावण-वध में विलम्ब की घड़ियों में राम देवी-स्मरण करते हैं। अन्य शक्तियों के स्मरण की शृंखला में राम अंतिम दिन युद्ध

के पूर्व परम आद्या की अर्चना नई प्रेरणा और नई स्फूर्ति देती है। 'भागवत कथा में महर्षि नारद ने राम को प्रबोधित किया था—

शृणु राम सदा नित्य शक्तिराया सनातनी,
सर्व काम प्रदा देवी पूजिता दुःख नाशिनी—

देवी पूजन से प्रसन्न हुई, साक्षात प्रगट हुई और परम ब्रह्म भगवान राम को वर देकर कि 'तुम रावण का वध अवश्य करोगे और अभी हजारों वर्ष पृथ्वी पर जीवित रहकर राम राज्य करोगे'—अन्तर्ध्यान हो गई।

दूसरी संभावना व्यक्त की गई है शिवमहिमा स्तोत्र के एक संदर्भ के प्रति, जिसमें विष्णु द्वारा शिव जी की आराधना का उल्लेख है। एक सहस्र कमल चढ़ाने के जाप में एक कमल की कमी हो गई तो विष्णु एक नेत्र चढ़ाने को उद्धत हुए जिसपर शंकर भगवान प्रसन्न हो उठे। 'राम की शक्ति पूजा' में श्री राम युद्ध के अंतिम दिन आराधना नहीं करते वरन पूरी नवरात्रि का व्रत धारण करते हैं। राम की चित्त एकाग्रता की इस नौ दिन की अवधि में युद्ध का भार भाई लक्ष्मण पर रहा। इसमें देवी भागवत कथा के नारद की भांति कपिश्रेष्ट जाबंवान राम को प्रबोधित करते हैं। तुलसी दास कृत 'रामचरित मानस' में सेतु बाँधने के पूर्व राम ने शिव-स्मरण किया था। परन्तु उससे भी दुरूह घड़ी लक्ष्मण को शक्ति लगना और सीता का वियोग और रावण को समाप्त न कर पाने का आत्मधिक्कार है जो अन्तर्यामी होने पर भी राम को खंडित करने लगता है। 'निराला' ने एक सहस्र कमलों का उल्लेख नहीं सामान्य सामर्थ्य अनुसार एक सौ साठ कमलो के अर्पित करने का उल्लेख किया है।

तीसरी संभावना अधिक निकट और सत्य प्रतीत होती है। 'निराला का हिन्दी के समान ही बंगला भाषा पर भी अनुराग था वे बंगला-साहित्य से प्रभावित भी थे। बंगला में 'कृति वासीय रामायण' सहज रूप में राम को देवी भक्त बनने को प्रेरित करती है। रावण पहले से ही शंकर और देवी भक्त था। इसी कारण उसे अजेयता का वरदान मिला हुआ था। मनुष्य रूपी राम अपनी सर्व सामर्थ्य से रावण से टकरा कर अन्त में उसके भक्ति रहस्य का अनुसरण करने पर विवश हो जाते हैं। और कोई उपाय अवशिष्ट नहीं रह गया था। विकट समस्या तब उपस्थित होती है जब देवी ने एक कमल छिपा लिया और राम पूरे मानता के कमल चढ़ा चुके थे। कृतिवासीय रामायण और 'राम की शक्ति पूजा' में समरसता चलती रहती है। अन्तर इतना है कि कृतिवासीय रामायण में शक्ति

पूजा को प्रेरित विभीषण करते हैं तो 'देवी भागवत कथा' की भांति राम को प्रेरित करते हैं जावंवान—

एक कर्म्म करो प्रभु निस्तार कारण,
तुषिते चडीर मन करोह विधान—
अष्टोत्तर शत नीलोत्पल करो दान—

जावंवान शक्ति की अनुकम्पा हेतु मौलिक कल्पना और शक्ति आराधन का प्रत्युत्तर शक्ति आराधन द्वारा देने का उद्‌बोधन करता है। क्या रावण से अधिक राम शक्ति-ध्यान नहीं कर सकते? साहस हारने से कभी मानव की इतिश्री नहीं होती। हिम्मत न हारना ही अन्तिम विजय की सूचक होती है। तभी श्री राम अपने समर्पित भक्त हनुमान से नीलपद्म लाने का सुझाव देते हैं। देवी द्वारा एक कमल छिपा लेना परीक्षामात्र थी आत्म निष्ठा की। शिव महिमा स्तोत्र की भांति 'राम की शक्ति पूजा' में राम को भी अपना एक राजीव लोचन समर्पित कर देने की उत्कट इच्छा होती है। दो पहर रात जाने पर भगवती दुर्गा को साक्षात प्रगट होना ही पड़ा—

होगी जय, होगी जय; हे पुरुषोत्तम नवीन,
कह महाशक्ति राम के वदन में हुई लीन—

वस्तु, शैली, अभिव्यजंना-प्रक्रिया और भाव-विन्यास सभी दृष्टियों से 'निराला' की 'राम की शक्ति पूजा' अधिक औदात्यपूर्ण, गंभीर और मौलिक कृति है। सर्वाधिक शक्तिशाली और सर्वग्राह्य!

'निराला' के काव्य-सृजन में पुरानी परम्पराओं के प्रति विद्रोह, नये मूल्य-भाव स्थापन का दृढ़ मन्तव्य और सामान्य परिणति जैसी अद्‌भुत विशिष्टतायें हैं। उनकी भक्ति की एकाग्रता कहीं-कहीं महाकवियों और संतप्रवरों के समकक्ष लगती है परन्तु वे सर्वोपरि कवि थे पुजारी या संत नहीं। ब्रजभाषा में खड़ी बोली का रूपान्तर भी परिलक्षित होता है। जैसे एक दोहा ध्यानाकर्षण के लिये पर्याप्त होगा-

श्याम कुंज, वन, यमुना श्यामा—
श्याम गगन घन-वारिद गाजे—

'गीतिका' में गुम्फित अन्तस्वर वैविध्यपूर्ण है। व्यक्तिगत जीवन का दुख, मानव समाज का वैषम्य और मनुष्य से तादात्म्य सा स्थापित करती प्रकृति के चित्र अपने आप में कितने अनूठे हैं—

क्षीण क्षण क्षणदेह, जीर्ण सज्जित गेह,
घिर गये हैं मेह प्रलय के प्रवर्षण

× × ×

मानव जहाँ बैल घोड़ा है,
कैसा तन-मन का जोड़ा है ?

× × ×

दो टूक कलेजे को करती जाती,
वह तोड़ती इलाहाबाद के पथ ....
पर पत्थर ....

× × ×

मुक्ति--नयन--उन्मीलन क्षण-क्षण
पलक पात आकुल खल बन्धन
चरण चार उपचार व्याधि के—
विमल साध की, सुधि की धारा ।

भाषा में अजीब संगीतमय प्रवाह था निराला के साहित्य में जो सर्वत्र प्रवहमान मिलता है। मुक्तकछन्दों में अधिक से अधिक अर्थव्यक्ति की विशिष्टता दर्शनीय है—

नयनों की नाव चढ़ा कोई
यह खाली पाँव बढ़ा कोई
मोती के मालकढ़ा कोई
सागर से भंवर उतर आई ।

भावों की अगम्यता कहीं-कहीं दुरूह-दुस्तर बन जाती है—

रूपक के रथ रूप तुम्हारा
शरद विभावरी, नभ तारा—

वर्षा ऋतु से ओत-प्रोत काव्य संग्रह 'गीतकुंज' में प्रियतम को वर्षा मानना उच्चविचारों को तुष्टि प्रदान करता है—

प्राण तुम पावन सावन गात

\+ + +

आओ, आओ वारिद वन्दन !
आग्र अनिमेष नयन—

करो निरामय वर्पण,
संचय हे संघर्पण—
कलित साधना के शुभ फल

काव्य-लहरी में प्रार्थना के झोंके भी हैं जिसमें अनुनय, उलाहना, पश्चाताप सभी कुछ समाया हुआ है —

खुल जाय न मिली गांठ मन की
लुट जाय न उठी राशि धन की ?
धुल जाय न आन शुभानन की
सारा जग रूठे, रूठ जाये—
+ + +
बुझी दिल की न लगी मेरी
तो क्या तेरी बात बने !
मरदी करनी से बुरी जो—
तरी डगमग कर दो,
अपने पूरे बल पार
किनारे न जो तर दो—

अपने स्वत्व में उस परम शक्ति का स्वरूप आंकने पर कवि निराला कह उठता है—

सत्य पाया जहाँ जगने,
दान तेरा ही वहाँ है,
जहाँ भी पूजा चढ़ी है
मान तेरा ही वहाँ है।

स्वानुभूति में उस परमपूर्ण की आस्था संजोना कवि कर्म नहीं, जनता जनार्दन का धर्म हो जाता है। तभी उसे अपने व्यामोहों से मुक्ति मिलती है।

कहते-कहते जग हार जाय,
रहते-रहते मन मार जाय—
जो उड़े न अम्बर हरे वास
तो अपने भाव न लाना तुम !
कलियों के हारों बहु पुकार,
उर लहरे गन्ध, बहे बयार—

यदि मिला न तुमसे हृदयछन्द
तो एक गीत मत गाना तुम—.

बड़ी स्पष्ट और कटु उक्ति है कवि मन की और यह प्रखरता उसे अपने जिये जीवन से मिली। अपने कृतित्व और व्यक्तित्व दोनों माध्यमों से निराला ने अवरोधक और शोषक समाज, सभ्यता और नियमों-संविधानों द्वारा प्रदत्त जीवन पद्धति के प्रति अपने को तिल-तिल आहूत, तर्पित करते रह कर ही अपने विद्रोही मन को सान्त्वना दी। ६०, ६२ पुस्तकों की रायल्टी की अतुलधन राशि का उन्होंने कोई हिसाब न रक्खा। पाई-पाई वसूलने के लिये खुद भी कितना तबाह होना पड़ता। मस्त-मनमौजीपन की कितनी घटनायें प्रसिद्ध हैं—भूखे-नंगे शरीर, विना दवा-उपचार के पास-पल्ले धन, वस्तुयें, सेवा, सब कुछ दूसरों को समर्पित कर देने वाला व्यक्ति, व्यक्ति रूप में अधिक श्रेयस रहा। रेल में अपनी समझ से विना टिकट यात्रा करना और पकड़े जाने पर कुर्ते की जेब से टिकट निकलना अजीब निश्चिन्त फक्कड़पन का जीवन हो गया था निराला का।

अपनी कृतियों का आधार समाज के दुखी व्यक्तित्वहीन प्राणियों को बनाकर उन्होंने अपने साहित्य को अजर-अमर बना दिया। 'चतुरी चमार' और 'बिल्लेसुर' की जीवन-गाथायें जन-जन में व्याप्त हो गई। आज भी गढ़ाकोला का प्राणिमात्र यही कहता पाया जाता है—'बड़े लोगन के बीच मा ज्यादा न बइठत रहें, हम लोगन तें बड़ा प्रेम करें।' जीवन को पूरी तरह जीना और साहित्य को सप्राण जीवन्त बनाना ही निराला का जीवन धर्म था—जैसे इस जन्म-यज्ञ के लिये वे प्रतिबद्ध होकर आये थे।

———

'राम की शक्ति पूजा' भाषा और काव्य-कला

—कुमारी सुमन सेठ, एम० ए०
३६५, वजरिया, भिन्ड [म० प्र०]

विशिष्ठ रूप से 'राम की शक्ति-पूजा' की भाषा और व्यापक रूप से निराला के काव्य के कला-सौष्ठव पर विचार करते समय यह समीचीन ही होगा कि हम काव्य-कला विषयक कवि की निजी मान्यताओं का अध्ययन कर लें। नितान्त अपारम्परिक रूप से काव्य-कला के विषय में कवि के व्यक्त ये विचार द्रष्टव्य हैं—'कला केवल वर्ण, शब्द, छन्द, अनुप्रास, रस, अलंकार या ध्वनि की ही सुन्दरता नहीं है, वरन् इन सभी से सम्बद्ध सौन्दर्य की पूर्ण सीमा है।' शब्दान्तर से हम कह सकते हैं कि निराला का काव्य-कला सम्बन्धी दृष्टिकोण एक संश्लिष्ट दृष्टिकोण है। 'राम की शक्ति पूजा' में वर्ण शब्द, वक्रोक्ति ध्वनि, रस, अलंकार के अतिरिक्त सूक्ष्मतम और प्रत्यक्षवत् बिम्बों की यह संश्लिष्टता सहज ही देखी जा सकती है। कविता के आरम्भ में शुद्ध वर्णन होने के कारण जहाँ उत्साह स्थायीभाव है और रस 'वीर' है वहाँ कवि ने विशिष्ट महाप्राण, द्वित्व एवं फैलाव वाले वर्णों के प्रयोग एवं उनकी आवृत्ति; समास गुम्फित शैली के द्वारा कथ्य में निहित सक्रियता तथा प्रभावान्विति में बाधक न हों इसलिए उपमा, रूपक जैसे भाव-सबल अलंकारों का प्रयोग करके मानो 'उत्साह' स्थायी को मूर्तिमंत कर वीर रस की सजीवतम् अभिव्यक्ति की है।

छायावाद की भाषागत प्रमुखतम् विशेषताओं—नवीनता, भावानुरूपता, ध्वन्यात्मकता, चित्रात्मकता तथा लाक्षणिकता को 'राम की शक्ति पूजा' में सहज ही देखा जा सकता है—

"प्रति-पल-परिवर्तित व्यूह, भेद कौशल-समूह—
राक्षस-विरुद्ध-प्रत्यूह, क्रुद्ध कपि-विषम हूह।"

योजक-अव्ययों से हीन, गति को साक्षात् करती यह शैली और 'हूह' जैसे प्रयोगों के द्वारा वानरों के क्रुद्ध-क्षुब्ध चीत्कार की ध्वनि निराला की भाषागत ध्वन्यात्मक सिद्धि का प्रमाण है। निराला जिस भाव-बिम्ब या चित्र को अंकित करना चाहते हैं, शब्द और शैली सप्रयास उसी के अनुरूप चुनते है। निराश राम का यह सजीव चित्र कवि की चित्रात्मक भाषा का ज्वलन्त प्रमाण है :—

"श्लथ धनु-गुण है, कटि-बन्ध स्रस्त-तूणीर-धरण,

....

दृढ़ जटा-मुकुट हो विपर्यस्त प्रतिलट से खुल
फैला पृष्ठ पर, बाहुओं पर, वक्ष पर विपुल।"

'राम की शक्ति-पूजा' की भाषा की एक बड़ी विशेषता यह है कि भावों के परिवर्तन के साथ-साथ वह भी स्वतः ही परिवर्तित होती चलती है—लेकिन बड़े हीं सहज और सजीव रूप से। कविता के आरम्भ में जहाँ युद्ध का वर्णन हैं; राम के हताश मन का चित्र, पुष्पवाटिका में सीता-राम के प्रथम मिलन का वर्णन हैं शक्ति-पूजा की भाषा औद्धत्य, गतिमयता, ओज, मार्दव एवं आत्मीयता का आदर्श सा प्रस्तुत करती हैं। कल्पना और मूर्ति-विधान का उसमें अप्रतिम शृंगार हुआ है। वीरत्व व्यंजक परुष भावों और सौन्दर्य को साक्षात् करने वाले कोमल भावों का अनुपम प्रस्तुतीकरण शक्ति-पूजा में सहज ही देखा जा सकता है। राम की स्तुति में उत्पन्न 'उपवन-विदेह का' मात्र चित्रपट शैली की भाँति एक के बाद दूसरे चित्रों की जो सृष्टि करता जाता है उसे और उसकी आत्मा को निराला ने जिस विशेष रूप से मृदुल और गतिशील भाषा के द्वारा उद्घाटित किया है वह सहज हीं श्लाध्य हैं।

"... .... याद आया उपवन
विदेह का,—प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन
नयनों का नयनों से गोपन-प्रिय सम्भाषण,
पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान-पतन।"

और दूसरी ओर हनुमान के आकाश-गमन तथा उनके कोप का जो अंकन है, वह 'शक्ति पूजा' की ओजस्विता और विराट्-चित्र कल्पना सामर्थ्य का ही द्योतक है।

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी 'राम की शक्ति पूजा' की गणना निराला की आलंकारिता प्रधान रचना में करते हैं परन्तु सूक्ष्म अध्ययन से यह कविता अलंकार मात्र ही प्रतीत नहीं होती। अपने संदेश की महानता और उद्देश्य की उदात्तता के साथ-साथ इस रचना में राम जैसे सार्वकालिक आदर्श के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व के उद्घाटन के लिए निराला ने जिस वातावरण की काव्यमय सृष्टि की है और इस हेतु जिस प्रौढ़ पद-विन्यास का प्रयोग किया है वह भी दृष्टव्य है। शक्तिपूजा की समास-गुम्फित पदावली सहज ही में 'बाण' की 'कादम्बरी' की भाषा की याद ताजा कर देती है।

प्रो० धनञ्जय वर्मा के अनुसार "निराला का प्रतीक विधान होमर और मिल्टन की भांति महा-काव्यात्मक प्रतीक योजना की समता करता है।" कालिदास ने अंधकार के लिए सूचीभेदयं का प्रयोग किया है। मिल्टन कहते हैं—उजेला नहीं है, केवल दृश्यमान अंधकार हैं। ऋग्वेद संहिता में एक स्थल पर अंधकार से अंधकार ढँका हुआ है और अंधकार के भीतर अंधकार छिपा हुआ कहा गया है। दुर्गम पर्वत पर उतरे नैशाधंकार का वर्णन उसी कोटि का है। 'शक्तिपूजा' में प्रलय और विक्षुब्ध वातावरण के अवसर पर जहाँ 'शत घुर्णावर्त, तरंग भंग उठते पहाड़' और वीररव व्यंजक शैली में जहां 'तीक्ष्ण-शर विधृत-क्षिप्र-कर वेग प्रखर' आदि शब्द विधान हैं वहीं मिलन की वेला के कोमल भावों के अनुरूप 'लतान्तराल, किसलय, पराग, मलय-वलय' आदि का सार्थक प्रयोग। यहाँ मानो शब्द ही भावों के प्रतीक बन गये हैं।

'शक्ति पूजा' के कला विधान में जो सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण भाषा-तत्त्व है उसका एक उल्लेखनीय गुण उसकी नाटकीयता भी है। पुरुषसिंह राम का हीनता-बोध, जीवन की विडम्बना का उनका अनुभव और उनके अपार पौरुष की विक्षुब्ध और करुण चीख प्रस्तुत पंक्तियों की नाट्यधार्मिता में मानो मूर्त्तिमंत हो उठी हैं—

"धिक् जीवन को जो पाता ही आया विरोध,
धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध।"

इस नाटकीयता के साथ-साथ 'शक्ति पूजा' की भाषा की वर्ण योजना संगीत पर भी आधृत है। भावों के आरोह तथा अवरोह के स्पष्टीकरण हेतु कवि ने संगीत शास्त्र सम्मत ध्वनियों के व्यंजक वर्णों का प्रयोग किया है। प्रसाद गुण से युक्त भावों के उद्घाटनार्थ—"कहती थीं माता मुझे सदा राजीव-नयन।" जैसी सहज, प्रवाहमयी तथा संदर्भ गर्भित भाषा का प्रयोग भी दृष्टव्य है।

'शक्ति पूजा' की भाषागत विशिष्टताओं के उपरिलिखित विवेचन के अतिरिक्त इस महाकाव्योपम कविता का अलंकार विधान भी परम आकर्षक और प्रभविष्णु है। एक सिद्ध कवि की भांति निराला ने प्रस्तुत कविता में अलंकार का प्रयोग केवल भाषा को मंडित करने के लिए ही नहीं वरन् भावों को उत्कर्षता प्रदान करने के लिए किया है।

"ऐसे क्षण अन्धकार घन में जैसे विद्युत,
जागी पृथ्वी-तनया कुमारिका छवि,.......।"

इन पंक्तियों में राम के निराशा से भरे हुए हृदय की अंधकार और रूप उज्वला

सीता की उस तमस वृत हृदयाकाश में चमकने वाली विजली से उपमा जितनी सामयिक और सटीक है उतनी ही भावपूर्ण भी। विभीषण के राम के प्रति उच्चरित उत्साहपूर्ण वचन अपने आशय के साथ-साथ राम के विशाद और विवशता को और गहन करते हुए विशेषोक्ति अलंकार का अत्यन्त सफल उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। अनुप्रास, वीप्सा, काकुवक्रोक्ति यमक आदि शब्दालंकारों के अतिरिक्त रूपक, उत्प्रेक्षा तथा अन्य अनेक अर्थालंकारों का भी अवसरोचित, भावानुकूल एवं सफल प्रयोग प्रस्तुत कविता में हुआ है।

जहाँ तक छंद का सम्बन्ध है 'शक्ति पूजा' की रचना, जो कि मुक्तछंद में है तत्युगीन कवियों एवं आलोचकों के समक्ष इस बात का एक ज्वलन्त प्रमाण है कि छंद काव्य की आत्मा नहीं उसका आवरण है जिसे कवि अपनी सामर्थ्य के अनुसार प्रयोग में ला सकता है। निराला का इस सम्बन्ध में निजी मत है कि जिस प्रकार आत्मा को मुक्त होने के लिए शरीर का त्याग करना पड़ता है उसी प्रकार कविता छन्द-रूपी शरीर का त्याग करके ही मुक्त हो सकती है। 'शक्ति पूजा' का मुक्तछंद अधुनातन मुक्त छंद की भाँति नहीं है जो कि वास्तव में खंडित गद्य है। शक्तिपूजा का छंद मुक्त होते हुए भी गति, यति, तुक, ताल प्रवाह से युक्त है। इस छंदहीन कविता में किसी भी छंदोवद्ध श्रेष्ठतम् कविता से अधिक छांदिकता है। 'शक्तिपूजा' का छंद वाह्य और आंतरिक दोनों ही स्तरों पर अत्यन्त मुक्त रूप से गतिशील है।

'मैं हर कीमत पर एक लेखक की हैसियत से अपने कर्त्तव्य का पालन करूँगा। अपने जीवन काल में मैं हमेशा विवादास्पद बना रहा लेकिन मेरी मृत्यु के वाद शायद मुझे लेकर कोई विवाद नहीं होगा। सत्य के मार्ग को कोई अवरूद्ध नही कर सकता। सत्य की रक्षा के लिए मैं शूली पर भी चढ़ने को तैयार हूँ। मेरे वाद और भी होंगें। वह दिन दूर नहीं जब यह अनुभव किया जायगा कि लेखक से उसकी कलम छीनने के परिणाम अच्छे नहीं होते।"

—सोल्जेनित्सिन

दो आँखें तीन कहानियाँ

नरेश मिश्र [इलाहाबाद]
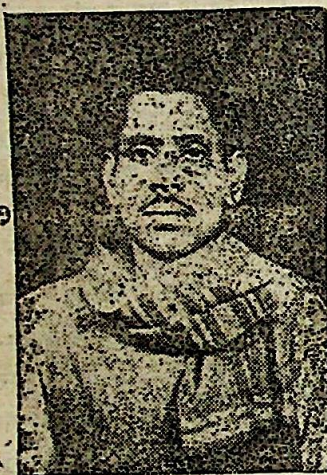
निराला जी की उन आँखों को भूल सकना मेरे लिए सम्भव नहीं। उन्हें देखा तो कई बार है किन्तु तीन बार मैंने जैसे और जिस रूप में उन्हें देखा, वह आकृति तीन ऐतिहासिक घटनाओं का आधार बन गईं।

कहानियाँ बनती हैं। एकाएक मेरे एक स्वार्थी मित्र का ध्यान सब ओर से हटकर निराला जी की ओर गया और वह सब वादों को छोड़कर निरालावादी हो गया। निराला जी उन दिनों ध्यान की अवस्था छोड़कर समाधि की अवस्था की ओर अग्रसर हो रहे थे। (जिसे मेरा मित्र असाध्य पागलपन की अवस्था कहा करता था।) उन्हें इसका भान भी नहीं होता था कि कौन किस भावना से उनके निकट आ रहा है। निराला जी के स्वास्थ्य के सम्बंध में चिन्ता व्यक्त करने, चर्चा चलाने और वक्तव्य देने की नई टेकनीक का प्रथम आविष्कारक भी मेरा मित्र ही था। बाद में तो इस टेकनीक की अनेक महानतम कृतियाँ प्रकाश में आईं।

अहिन्दी भाषा-भाषीक्षेत्र के दो विद्या प्रेमी रईश निराला जी के प्रति अत्यंत श्रद्धा रखते थे। वे निराला जी को कुछ आर्थिक सहायता देकर अपने को कृतार्थ करना चाहते थे। किन्तु उन दिनों सहायता किसके माध्यम से दी जाय, इस प्रश्न पर बहुत विवाद था। मेरे मित्र ने इस अवसर से लाभ उठाकर शीघ्र उन दोनों को विश्वास दिला दिया कि दी जाने वाली रकम को निराला जी के उपयोग में खर्च किये जाने का वह पूरा प्रवन्ध कर देगा। यह निश्चय हुआ कि उसी के निवास स्थान पर वे दोनों निराला जी के दर्शन करेंगे। मेरे मित्र ने बहाने से निराला जी को आने का निमंत्रण भी दे दिया जिसे उन्होंने स्वीकार कर लिया।

नियत दिन ठीक समय पर जब मैं निराला जी को बुलाने गया तो वे अपने पड़ोसी वैद्य जी के यहाँ बैठे सितार सुन रहे थे। मैंने परखा वादन समाप्त हो जाने पर जब उनसे चलने के लिए कहा तो उन्होंने स्नेह पूर्वक असमर्थता प्रकट की। मैंने लौटकर अपने मित्र को इसकी सूचना दी। यह बात सुनकर वह जैसे आसमान से गिर सा गया।

"तुमने ठीक से नहीं कहा। तुम्हें बता देना चाहिए था ......। खैर, चलो, मैं चलता हूँ। आयेंगे क्यों नहीं ?" कहकर वह मुझे साथ लेकर फिर निराला जी के पास पहुँचा।

"चलिये।" मेरे मित्र ने कहा। अर्ध निमीलित नेत्रों से निराला जी ने उसे निषेध करने के लिए संकेत किया।

किन्तु वह हार मानने वाला नहीं था। बेहयायी को बेतकल्लुफी के रूप में प्रकट करना उसकी अपनी कला थी।

"चलिए, चलिए, वहाँ इसका भी इन्तजाम है।" उसने हाथ से बोतल की मुद्रा बनाकर मुँह की ओर ले जाते हुए कहा।

मैं वज्राहत सा स्तब्ध होकर रह गया। ओह, यह निर्दय, कसाई इतनी सरलता से इनके मर्म स्थल पर चोट करेगा? महाकवि इस भाव भी बिकेंगे, स्वप्न में भी ऐसी आशा न थी।

निराला जी ने नींद से भौचक जगे व्यक्ति की तरह आँखें खोलकर सिर को एक झटका दिया और आँखें मेरे मित्र पर गड़ा दीं। एक क्षण के लिए लाल-लाल चिनगारी सी निकली उनकी आँखों से। मुझे लगा, महाकाल के तृतीय नेत्र में अवश्य संसार भस्म कर देने की शक्ति रही होगी। भयंकर क्रोध की मुद्रा थी वह किन्तु दूसरे ही क्षण उनकी आँखों में करुणा और तरस खाने के भाव घूम गये। ठीक वैसे ही जैसे रंगमंच के पार्श्व की लाइट पर लाल, पीले, नीले कागज रखने से रोशनियाँ बदलती हैं। वह अत्यन्त मर्मस्पर्शी क्षण था। मुँह से कुछ नहीं कहा निराला जी ने। केवल आँखें गड़ाकर दो तीन मिनट तक उसी प्रकार देखते रहे। बहुत कुछ कह गईं वे आँखें। शरद ऋतु के नीले आसमान की तरह चमकते नेत्रों से ताककर उन्होंने अपने घातक की औकात, चश्में के नीचे से ताकती मक्कार बिल्ली की सी निगाहें और खद्दर की टोपी से ढंका अवसरवादी दिमाग सभी का पर्दाफाश कर दिया। अब सब कुछ वैसे ही स्पष्ट था जैसे मिलिट्री की सर्च लाइट पड़ने पर जंगल में छिपी शत्रु की शक्ति स्पष्ट हो जाती है। मुझे लगा, वे आँखें कह रही हैं, "बस इतना ही। यही उम्मीद थी तुमसे।" आपकी कल्पना को स्पष्ट चित्र देने के लिए मैं कहूँगा कि उस समय निराला जी की आँखें उस ईसा की तरह थीं जिसने क्रॉस पर चढ़ते समय रोमन सिपाहियों पर करुण दृष्टि डाली थी। या यही समझ लीजिए की यदुकुल के विनाश से व्याकुल भगवान श्री कृष्ण को प्रयास क्षेत्र में बहेलिये ने तीर मार दिया हो और उन्होंने अपने आक्रमणकारी व्याघ्र को ममतापूर्ण नेत्रों से देखा हो।

मेरे मित्र का चेहरा तो बुझ चुका था। अपनी बात कहकर उसने उसका असर देखने के लिए निगाहें उठाई थीं किन्तु आँखें चार होते ही उसके आदनूसनुमा चेहरे पर पसीना आ गया और गर्दन शर्म से झुक गयी। जिन्दगी में पहली बार उसे शर्म आई। अस्वाभाविक-सी शर्म क्योंकि इसके पहले तो वह कभी शर्माया न था। कुछ समय तक यही स्थिति रही फिर रुमाल से अपने चेहरे का पसीना पोंछते हुए वह बोला, "हैं-हैं, कष्ट होगा। रहने दीजिए। रहने दीजिए।" और तब मैं जागा। मैं उन आँखों को कैसे भूल सकता हूँ।

मेरी दूसरी कहानी उन दिनों की है, जब इलाहाबाद की पुलिस अपने प्रधान मंत्री के स्वागत में इतनी व्यस्त रहती थी कि सरे शाम शहर के मध्य भाग में डाके जैसी छिट-फुट घटनायें हो जाया करती थीं।

चमचमाती कारों के कारवाँ का नेतृत्व करते, दर्शनार्थियों के जय-जयकारों और अभिवादनों का उत्तर सम्पुटित करों से देते प्रधान मंत्री पं० नेहरू की कार दारागंज के एक प्रतिष्ठित नागरिक की कोठी में घुसी जो राय साहब के अतिरिक्त डाक्टर भी हैं।

अन्दर कोई खास प्रोग्राम था नहीं। हाँ भोज का कोई संक्षिप्त संस्करण होने वाला था। किन्तु कोठी के फाटक से लेकर दूर-दूर तक सड़क के दोनों किनारों पर पुलिस का सख्त पहरा था। भड़कीली पोशाकें पहने सशस्त्र पुलिस जवान (जिनमें अधिकतर सब-इन्सपेक्टर ही थे) मुस्तैदी से टहल रहे थे। फाटक के अन्दर जाने वालों को कोई पास नहीं दिखलाना पड़ता था। खद्दर ओढ़ कर कोई भी जा सकता था। बे-खद्दर लोग टोंके या वापस कर दिये जाते थे।

इतने में ही बगल की गली से निराला जी निकले। एक तहमद पहने, हाथ में चाय का प्याला लिये। वे धीर गम्भीर चाल से कोठी की ओर बढ़े।

"रुको कहाँ जा रहे हो।" एक सब-इन्सपेक्टर ने टोका।

उत्तर में निराला जी ने सिर हिलाकर कोठी की ओर संकेत किया क्योंकि हाथ खाली नहीं थे। चाय का प्याला था उनमें।

"तुम वहाँ नहीं जा सकते।"—इन्सपेक्टर की रोबदार आवाज में नौकरशाही की बू आ रही थी। उसने सोचा होगा कोई पागल है खद्दर तो पहने नहीं है।

निराला जी के कदम एक क्षण को रुके। दूसरे ही क्षण उन्होंने पुलिस इन्सपेक्टर की ओर कदम बढ़ाया और सिर तान कर उसकी ओर ताकने लगे। बहुत दिन बाद मुझे उनकी आँखों में आश्चर्य और क्रोध के वही पुराने भाव दिखे

थे। किन्तु शीघ्र ही वे करुणा और तरस खाने वाले रंगों में बदल गये। वही लाल, नीले, पीले रंगों का परिवर्त्तन। बिल्कुल वैसे ही। एक झटके से निराला जी मुड़े। अस्फुट स्वरों में कुछ बड़बड़ाये और गली में घुस गये। मुड़ते समय उन्होंने प्याले और तश्तरी को नाली में फेंक दिया।

इसके बाद वही कोलाहल। 'नेहरू जी की जय' की तुमुलध्वनि और पुलिस वालों के सेल्यूट के बीच प्रधान मंत्री की कार भर्र से गुजर गई। निराला जी ने तो नहीं, हाँ उनके प्यालों ने जरूर देखा होगा नेहरू को।

मुझे तो केवल इतना ही कहना है कि मैं उन आँखों को नहीं भूल सकता।

मेरी तीसरी कहानी बिल्कुल साधारण-सी है। अजन्ता प्रेस लिमिटेड के प्रतिनिधि श्री वीरेन्द्र नारायण सिंह के साथ मैं निराला जी से मिलने गया। वीरेन्द्र जी को निराला जी से कुछ सम्मतियाँ और आर्शीवाद लिखाने थे। उस समय महाकवि इतने अस्वस्थ्य थे कि उनसे कुछ कहना उचित नहीं था किन्तु तय यह हुआ कि न लिखें तो न सही कम से कम दर्शन तो हो जायेंगे। हम दोनों ने जाकर चरण छुये और बैठ गये। निराला जी ने केवल एक बार देखा था वीरेन्द्र जी को। उस प्रथम भेंट में वीरेन्द्र जी ने उन्हें बीड़ी और माचिस की आकस्मिक भेंट दी थी। बस इतनी ही जान-पहिचान थी किन्तु काफी दिनों के बाद भी महाकवि भूले नहीं थे उस भेंट को। वीरेन्द्र जी को देखते ही हँस कर पूछा—"लाये हो।"

और वीरेन्द्र जी ने तुरंत ही एक बण्डल बीड़ी और माचिस निकाल कर सामने रख दी। निराला जी ने एक बीड़ी निकालकर मुँह में दाबी तो उन्होंने माचिस से जला दिया।

"बस जजिया, चौथ सरदेशमुखी जो भी समझो।" अत्यन्त सन्तुष्टि से बीड़ी का कश खींचते हुए महाकवि ने कहा "नहीं करो के मामले में तो आप मनु के सिद्धान्त का पालन करते हैं। कुछ शर्माते हुए वीरेन्द्र जी ने उत्तर दिया।

"सच"—कहकर निराला जी ने हँसती हुई स्नेहसिक्त आँखें वीरेन्द्र जी की ओर गड़ा दीं। एक मिनट के लिए मुझे लगा की आँखें वही हैं किन्तु रंगों का परिवर्त्तन उस रूप में नहीं हो रहा है। स्नेह की अजस्त्र वर्षा हो रही है उनसे। मुझे पहली बार बहुत अच्छा लगा।

भला उन हँसती आँखें को मैं कैसे भूल सकता हूँ।

'निराला' और 'शैली'

--प्रो०--राम जवाहिर द्विवेदो एम० ए० द्वय
फैजावाद (उ० प्र०)

कृष्ण पक्ष के स्तब्ध नीरव निशीथ में जब जन समाज घने अंधकार से व्याकुल था, हाथ फैलाये कुछ टटोलने के प्रयास में तल्लीन था, ऐसे वातावरण में दो बार तड़ित् तड़प उठी एक पश्चिम दिशा से तो दूसरी पूरब से। लोग निहाल हो उठे, जन मानस के आह्लाद का ठिकाना न रहा. उनका मार्ग-दर्शन हुआ, अभीष्ट दृष्टि के सामने पड़ा, हमारे 'शेली' और निराला ही वह विद्युत छटा हैं जो अपनी प्रखर आभा से समाज को चका-चौंध कर गए। ये दोनों महाकवि दो आभामय नक्षत्रों की भाँति साहित्य गगन में उदित हुए, बादलों ने इन्हें ढंकने का प्रयास किया समाज ने इन्हें पुच्छलतारा बताकर उंगली उठायी पर ये देदीप्यमान शक्तियाँ अपनी प्रखर किरणों को बिखेरती ही रहीं। ये दोनों महाकवि अपने व्यक्तिगत जीवन की अनुभूतियों से, हर्ष-विषाद का आलिंगन कर कभी रोये कभी मुस्कराये, कभी आशा और कभी निराशा के साथ स्वच्छंद भाव से विहार किए। व्यक्तिगत जीवन की कठिनाइयों ने उन्हें आँख दिखाया, समाज ने उन्हें कुम्हड़ बतिया समझकर तर्जनी दिखायी, आलोचकों ने साधारण पौधा समझकर इन्हें उखाड़ फेंकने का प्रयास किया पर जीवन के झंझा वातों को ललकारते हुए, समाज के क्रूर अट्टहासों का तांडव नृत्य देखते हुए, आत्मा में विद्युत छटा छिपाए, प्राणों में पुलक लिए मन की कोमल एवं सुकुमार भावनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करते हुए अपने अभीष्ट की प्राप्ति के लिए अग्रसर होते रहे। मार्ग दुर्गम ऊखड़खावड़ और अपरिचित था पर दुर्गम कायरों के लिए, ऊखड़खावड़ कोमलांगी नायिकाओं के लिए, अपरिचित घर की चहर-दीवारी में बंद रहने वालों के लिए। ये समाज में विचरण करने वाले साहसी बाज. कल्पना पर से स्वर्ग तक उड़ने वाले वीर थे। मार्ग की कठिनाइयाँ स्वयं इसके लिए फूल शैय्या सिद्ध होती गईं, जीवन के कठोर धरातल पर क्रूर कठिनाइयों ने जब प्रहार करने का प्रयास किया तो ये सोने की भाँति चमक उठे। कठिनाइयाँ ही व्यक्ति की वास्तविक कसौटी हैं। लोहा ऐसी धातु भी अग्नि में पड़ने से लहलहा कर चमक उठती है। इनका अभ्यान्तरिक जगत इतना प्रबल था कि वही बाह्य जगत को ललकारते हुए आगे बढ़ने के लिए इन्हें प्रेरणा प्रदान करता रहा।

श्रीमती शची रानी गुर्टू के पाश्चात्य तथा पौर्वात्य जगत के महाकवियों एवं

लेखकों के तुलनात्मक अध्ययन से मुझे बड़ी प्रेरणा मिली। डा० शिवकरण सिंह के शोध प्रबन्ध ने उस प्रेरणा को और बल प्रदान किया। वैसे दो कवियों अथवा लेखकों की तुलना करना मैं उचित नहीं समझता क्योंकि हरेक का व्यक्तित्व अलग-अलग होता है उसकी विचारधारा उस युग के अनुकूल रहती है तब फिर दो युगों के कवियों की तुलना करना कहाँ तक न्यायसंगत हो सकता है? साथ ही तुलना करके किसी को बड़ा और किसी को छोटा कहना तो उस लेखक के साथ अन्याय है क्योंकि हरेक का क्षेत्र अलग-अलग होता है। व्यक्ति सभी समान हैं आंगिक समानतायें, रंग की समानता, डील डौल की समानता सब कुछ होते हुए एक व्यक्ति के समान ही दूसरा व्यक्ति इस संसार में ढूँढना कठिन है यही असमानता उन्हें समाज के अन्य व्यक्तियों से अलग करती है। इसलिए मेरा उद्देश्य 'शेली' और निराला के तुलनात्मक अध्ययन से केवल इतना ही है कि हम उनकी समान भावनाओं को एक साथ रख कर देखें, दोनों कवियों द्वारा व्यक्त भावों की रसानुभूति साथ-साथ करें।

जीवन परिचय :—महाकवि निराला का जन्म १८९६ ई० में वसंत पंचमी को हुआ। इनका पूरा नाम सूर्य कान्त त्रिपाठी है। बचपन से ही ये अपने नाम को सार्थक बनाने में लग गए और अपनी प्रखर किरणों से जन मन को आनंदित करने लगे इनकी प्रतिभा एवं विद्वता से प्रभावित होकर महाराज म० षादल के छोटे भाई इन्हें गोद लेना चाहते थे पर काल की विकराल आंखें इसे न देख सकीं और वे समय से पूर्व काल कवलित हो गए।

महाकवि 'शेली' ने ४ अगस्त सन् १७९२ में जन्म लेकर इस तिथि को अमर किया, निराला जी के घर में जहाँ पवित्र ब्राह्मण संस्कारों का वातावरण था उसके विरोध में एक शब्द भी कहने पर निराला जी को मार खानी पड़ती थी वहाँ 'शेली' के घर वाले मध्य वर्गीय समाज से सम्बंधित संकुचित मनोवृत्ति के व्यक्ति थे। 'शेली' की प्रारंभिक शिक्षा घर पर उनकी बहनों के साथ हुई। १८०२ में उनको भरती ब्रेण्टफोर्ड के सिअन हाउस स्कूल में हुई। 'शेली' बचपन से ही निराला जी के समान ही विद्रोही थे उन्हें निरंकुशता से घृणा तथा पाशविक शक्तियों से चिढ़ थी शेली अपनी मस्ती में मग्न रहते। उन्हें पाठ्य-पुस्तकों से रुचि न थी पर ग्रीक भाषा की ओर कुछ झुकाव था। क्रांति की भावना उसके हृदय में हिलोरें मार रही थी। इसी बीच उन्हें (सन् १८०८) विद्योपार्जन हेतु कैम्ब्रिज भेजा गया। तत्कालीन वातावरण एवं मनोवृत्तियों से क्षुब्ध 'शेली' को वहाँ चैन न मिलती इसलिए अपनी

भावनाओं को प्रकाश में लाने हेतु 'शेली' ने "नैसिसिटी आफ एथीज्म" लिखा जिसे पढ़ते ही अधिकारियों के कान खड़े हो गए, 'शेली' को झुकाने, दबाने का प्रयास किया गया पर यह सम्भव न था इसलिए उन्हें विद्यालय से निष्कासित कर दिया गया।

'शेली' अपने जीवन के १९ वें वर्ष में 'हरियावेस्ट ब्रुक' के सम्पर्क में आया और दोनों प्रणयसूत्र में बंध गए पर कुछ कारण विशेष पड़ जाने से दोनों में अधिक दिन तक न निभ सका, 'शेली' का सम्बन्ध, इन दिनों 'गाडविन' से गहरा था इसलिए 'वेस्ट-ब्रुक' से सम्बन्ध विच्छेद कर 'मैरी गाडविन' के प्रेम-फाँस में फंस गये यहीं उनके प्रेम सम्बन्ध का अंत हो जाता है यद्यपि एक बार 'एमिली विवि-धानी' भी उनके आकर्षण का केन्द्र बनी पर कठोर नियंत्रण के कारण यह स्वप्न साकार न हो सका। यह घटना हृदय में कसक के रुप में रह गयी।

इस प्रकार निराला और 'शेली' दोनों बचपन से ही विद्रोही थे जिसके फल-स्वरुप इन दोनों को काफी सजा भी भुगतनी पड़ी। अध्ययन काल में पाठ्य-पुस्तकों के अध्ययन में दोनों की अभिरुचि कम थी। यदि निराला जी अपनी मातृभाषा हिन्दी की अपेक्षा बंगला की ओर झुके थे तो 'शेली' अंग्रेजी की अपेक्षा ग्रीक की ओर। निराला जी रवीन्द्र जी से विशेष प्रभावित थे तो शेली 'गाडविन' से। हिन्दी क्षेत्र में आने की प्रेरणा यदि निराला जी को अपनी धर्म पत्नी से मिली, तो 'शेली' ने भी 'मैरी गाडविन' से बहुत कुछ प्रेरणा स्वरुप ग्रहण किया।

जीवन संघर्ष :--ये दोनों कवि बौद्धिक, नटखट एवं स्वतंत्र प्रकृति के व्यक्ति बचपन से ही थे। छोटी-छोटी बातों को भी गंभीरता पूर्वक सोचने की क्षमता का स्वतंत्र विकास इन दोनों कवियों में हुआ। जीवन एवं जगत के चिन्तन से उत्पन्न खीझ जहाँ इनके हृदय में रह-रहकर बिजली सी चमक जाती वहीं समाज एवं प्रकृति (भाग्य) ने भी इन दोनों को विषपान कराया। ये दोनों महाकवि भोले बाबा की भाँति सहर्ष विषपान कर अमर हो गए। 'शेली' के स्वभाव से उसके माँ-बाप तथा पूरा समाज असंतुष्ट था। समाज ने उसे निष्कासित ही कर दिया। विश्व-विद्यालय भी छोड़ना पड़ा। इनका मित्र 'कीट्स' साथ छोड़कर परलोक चला गया। समाज में 'शेली' को सहारा देने वाला कोई न था।

महाकवि निराला के जीवन में तो इससे भी बढ़कर तूफान आए। माँ ने इनका साथ बचपन में ही छोड़ दिया था। बीस वर्ष की अवस्था में पिता जी भी इन्हें छोड़कर स्वर्ग चले गए। दो वर्ष बाद पत्नी एवं बड़े भाई साहब भी परलोक

सिधारे। एक मात्र पुत्री 'सरोज' जिसे कवि अपने प्राणों से भी अधिक मानता था इन्हें छोड़कर चली गई। परिणाम स्वरूप दोनों कवि निराशावादी हो गए।

सबसे तीखी बौछार इन कवियों पर आलोचकों ने की। 'शेली' का तो विश्वास है कि उनका मित्र "कीट्स" इन दुष्ट आलोचकों के कारण ही असामयिक मृत्यु का शिकार हुआ। 'शेली' को समाज की आलोचना के साथ-साथ कवियों की आलोचना भी सहनी पड़ी। इनके जीवन काल में इन्हें महत्त्व प्रदान करने वाला कोई न मिला यहाँ तक कि 'विक्टोरिया' के युग में भी 'शेली' को कवि के रूप में नहीं स्वीकार किया गया। 'अरनोल्ड' ने शेली को "प्रभावहीन दूत" कहा है।

He is a beautiful and intel ectual angel beating in the Void his luminuous wings in vain."

'शेली का जीवन चरित्र' (Life of shelley) 'डाउडेन' (Dowden) ने लिखा जिसमें इस बेचारे की बहुत छीछालेदर की गई। अधिकांश आलोचक 'शेली' के व्यक्तिगत जीवन, व्यवहारों तथा स्वतंत्र विचारों से असंतुष्ट होकर 'शेली' को कवि के रूप में स्वीकार करने को तैयार न थे। आधुनिक युग में 'ग्रेस्ड' आदि आलोचकों ने 'शेली' की प्रतिभा को स्वीकार किया तब से 'शेली' एक महान् कवि समझा जाने लगा और उसके प्रशंसकों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है।

महाकवि निराला जी को भी पहले उनके आलोचक समझ न सके। उनके व्यक्तित्व से चिढ़कर, पुरातनता के मोह में लोगों ने प्रहार करना प्रारंभ किया। उनको लोगों ने 'मतवाला' 'फक्कड़' आदि कहा। उनकी कविता लोगों को प्रिय न थी उनके छंदों को 'रबड़' तथा 'केंचुवा' छन्द का नाम दिया गया पर बाद में चलकर वही निराला बन गये। वही छंद उन्हें अमरत्व प्रदान कर गया। निराला जी आगे चलकर अपने जीवन काल में ही सम्मान तथा श्रद्धा के पात्र बने पर बेचारे 'शेली' को यह नसीब न हुआ।

व्यक्तित्व तथा चरित्र :—"निराला बहुत ही विशाल व्यक्तित्व के युग पुरुष थे, गजराज की मस्ती, मृगराज का ओज, चट्टान की दृढ़ता, निर्झर सी मुक्त तरलता आकाश की विशालता एवं धरती की सहन शक्ति का कुछ भी अनुमान है तो आप निराला के निराले व्यक्तित्व की कल्पना कर सकते हैं।" निराला जी हजारों के भीड़ में अकेले दिखाई पड़ते थे। डा० राम विलास शर्मा ने लिखा है :—

यह सहज विलम्बित मंथर गति जिसको निहार
गजराज लाज से राह छोड़ दे एक बार
काले लहराते बाल देख, स.वन विशाल
आर्यों का गर्वोन्नत प्रशस्त अविनीत भाल
अब वन्य जन्तुओं का पथ में रोदन कराल
एकाकीपन के साथी हैं केवल शृगाल।'

'शेली' नटखट, आकर्षक, प्यार करने योग्य स्वतंत्र दृढ़ तथा उदार व्यक्ति था, उसकी बड़ी-बड़ी सुन्दर आँखें लम्बे घुँघराले बाल, कोमल शरीर, क्षीण पर सशक्त काया लोगों के आकर्षण का केन्द्र थी। उसका पूरा व्यक्तित्व तेजस्वी, प्रदीप्त, उत्साहपूर्ण तथा विविध असामान्य प्रतिभा से आपूर्ण था। लोगों ने 'शेली' की तुलना पुष्प से की है। एक व्यक्ति का कथन है कि 'शेली' आकर्षक एवं कोमल पुष्प के समान है जिसका सिर अत्यधिक वर्षा के कारण झुक गया है उसमें फूल सदृश पीलापन है जो प्रकाश से दूर है, तो दूसरे किसी ने कहा कि वह फूल की तरह कोमल है जो मलयानिल से भी म्लान है।' **(A History of English Litt by C. Richett. P. 336)**

इस प्रकार इन दो महाकवियों के व्यक्तित्व में बड़ा वैषम्य दिखाई देता है पर दोनों की अनुभूतियों एवं विचारों में बहुत साम्य है। पर इन दोनों का व्यक्तित्व लोगों के आकर्षण का केन्द्र बन ही गया। यदि निराला अपने सुगठित वदन एवं भीमकाय शरीर से लोगों को आकर्षित करते तो शेली अपनी कोमलता एवं सुन्दरता से ध्यान खींच लेता। यह व्यक्तित्व का वैषम्य बहुत कुछ मेरी समझ में दो देशों की विपरीत जलवायु तथा वातावरण के कारण आया होगा।

निराला जी बचपन से ही उदार, दयालु तथा सहिष्णु विचारों के व्यक्ति थे इनकी सहिष्णुता तथा सहनशीलता बहुत कुछ स्वाभिमान के आधिक्य से दब गई। पर इनकी उदारता एवं दयालुता की प्रशंसा आज तक किसी लेखक की लेखनी करने में समर्थ न हो सकी। निराला जी हरिश्चन्द्र एवं दानवीर कर्ण से भी बढ़कर दानी थे इनके दान करने की प्रवृत्ति के सम्बन्ध में अनेक कहानियाँ प्रचलित हैं। स्वयं भूखों रह जाने पर दूसरों को भूखा देखना इनके स्वभाव के विपरीत बात थी। इस क्षेत्र में इनकी समता करने वाला कोई दूसरा नहीं दिखाई देता। ये सचमुच संत तथा महात्मा थे।

निराला जी यदि ब्राह्मण कुल में पैदा हुए थे तो 'शेली' भी एक कुलीन तथा

सम्भ्रांत परिवार में पैदा हुआ था। फिर भी 'शेली' अपने उदार विचारों के कारण जन साधारण, शोषित तथा त्रस्त लोगों से अधिक स्नेह रखता था। 'शेली' ने अपने 'Revolt of Islam' में लिखा है कि वह न्यायी, स्वतंत्र तथा दयालु विचारों का व्यक्ति होगा क्योंकि स्वार्थी तथा सुदृढ़ लोगों के अत्याचारों को देखते-देखते वह थक गया है।

"I will be wise and just and free and mild if in me lies such power, for I grow weary to behold the selfish and strong still tyrannize without reproach or chek."

The Revolt of Islam.

'शेली' मानवतावादी था, क्रांतिकारी, तथा एक आदर्श स्वप्न द्रष्टा भी। वह प्लेटो की भाँति एक आदर्श राज्य की कल्पना करता था 'शेली' स्वयं स्वतंत्र विचारों का व्यक्ति था इसलिए लोगों की स्वतंत्रता पर उसे बड़ा ध्यान था। स्वतंत्रता के प्रति प्रेमोद्गारों को 'शेली' ने इस भाँति व्यक्त किया।

"Obedience base of all genius, virtue, freedom, truth makes slaves of men, and the hunman fame a meehanised automation."

हरेक स्वतंत्र विचारों का व्यक्ति अवज्ञाकारी होता है इसीलिए तो निराला जी की पिटाई होती थी जिसकी याद उन्हें आजीवन बनी रही। आज्ञाकारिता सचमुच स्वतंत्र चिंतन की प्रतिभा को कुंठित करती हुई व्यक्ति को पराश्रित तथा परमुखापेक्षी बना देती है। इस प्रकार निराला और 'शेली' का मानवतावादी दृष्टिकोण चरित्र की आधारशिला बना जिस पर उनके व्यक्तित्व तथा चरित्र की भित्ति निर्मित हुई। व्यक्तिगत जीवन में निराला का चरित्र भारतीय महात्मा तथा ब्राह्मण का चरित्र है पर 'शेली' इधर-उधर प्रेम फांस में पड़कर भटकता रहा। यह चारित्रिक वैषम्य भी सांस्कृतिक वैषम्य का परिणाम है।

कविता सम्बन्धी विचार—निराला के व्यक्तित्व की उत्कृष्टता के पूंजीभूत स्वरुप को हम उनकी काव्य त्रिवेणी में अन्तः सलिला सरस्वती की भाँति सर्वत्र पाते हैं। कवि ने अपने व्यक्तित्व के उसी अमर अंश को काव्यमय स्वरुप प्रदान किया जो सार्वभौमिक सत्य बनकर जनमानस में कूजते भाव मयूरों को दिखाने में समर्थ है जो जनजन को आत्म पुकार को उद्वेलित तथा उनके राग में राग मिला-कर गाने में समर्थ है। जीवन की दृष्टि से निराला जी किसी दुर्लभ सीप में ढले

सुडौल मोती नहीं हैं जिसे अपनी महार्घता का साथ देने के लिए, स्वर्ण एवं सौन्दर्य की प्रतिष्ठा के लिए अलंकार का रूप चाहिए। वे तो अनगढ़ पारस के भारी शिलाखंड हैं। न मुकुट में जड़कर कोई उनकी गुरुता सम्हाल सकता है और न त्राण बनाकर कोई उसका भार उठा सकता है। वह जहाँ है, वहीं उसका स्पर्श सुलभ है।" "साहित्य के नवीन युग-पथ पर निराला जी की अंक-स्मृति गहरी, स्पष्ट उज्ज्वल और लक्ष्यनिष्ठ रहेगी। इस मार्ग के हर फूल पर उनके चरण-चिन्ह, एवं हर शूल पर उनके रक्त का रंग है।

निराला जी ने वस्तुतः कृष्ण का रूप धारण कर मां कविता का बन्धन काटा; लौह श्रृंखलाओं में जकड़ी कविता को मुक्त किया। छायावादी कवि के रूप में युग प्रवर्तक निराला ने जो आवाज बुलंद की वह वस्तुतः समय की पुकार थी जो उन्होंने नारा लगाया वह सचमुच अपेक्षित एवं अनिवार्य था निराला जी ने अपनी इच्छा को इसी ढंग से व्यक्त किया :—

ताल ताल से रे सदियों के जकड़े हृदय कपाट
खोल दे रे कर कठिन प्रहार,
आए आभ्यंतर सयत चरणों से नव्य विराट
करे, दर्शन पाए आभार।

इस क्रांति भावना में कवि के सामाजिक हित की भावना निहित है। निराला जी के ही शब्दों में सामाजिक हिताहित की चिंता न करके मनमाना साहित्य सृजन करना वैसा ही है जैसा महमूद मियाँ का अपने बकरे की पूँछ की ओर से जबह करना।" 'कीट्स की तरह उनका भी विचार है कि कला वह है जिसमें मनुष्य के मन का चित्र दिखलायी दे।

निराला जी ने कवि के लिए जागरुक प्रतिभा लोक वृत्ति की अनुभूति, शब्दों के मर्मज्ञान एवं मौलिकता की साधना को सापेक्षित तत्व माना है। वे रस को काव्य का जीवन मानते हैं—"नव रसों को समझाने और उन्हें उनके यथार्थ रूप में दर्शाने की शक्ति जिसमें जितनी ज्यादा है वह उतना ही बड़ा कवि है।" काव्य शिल्प के सम्बन्ध में निराला जी ने कला समृद्धि प्रदान करने वाले उपकरणों में से काव्य के रूपों का विवेचन करते हुए 'गीति काव्य में कवित्व, मौलिकता, संगीत और भावानुरूप भाषा पर विशेष बल दिया है' निराला जी ने भावनात था कला के संयोजक उपादानों पर मौलिक रूप से विचार किया है। हिन्दी काव्यशास्त्र में निराला जी का काव्य चिंतन ऐतिहासिक महत्त्व रखता है।

'फ्रांसिस टाम्सन' ने 'शेली' के सम्बंध में कहा है
we have that absolute virgin gold of song which is the searest among human products ."

'शेली' के गीतों में आह्लाद तथा सादगी प्रमुख रूप में मिलती है। निराला और 'शेली' दोनों के गीतों में व्यक्तिगत वेदना का चित्रश है जो उनके गीतों को बहुत सरस बना देता है। अरनोल्ड ने 'शेली' के गीतों को दो भागों में विभाजित किया व्यक्तिगत भावों से प्रान्त्रावित गीत:—The cloud, to a skylark Hymn to intellectual beauty (ode to the west wind,) आदि दूसरे प्रकार के गीतों में जिसमें शेली का मानवतावादी दृष्टिकोण मुखर हो उठा है:- 'Queen Mal', 'the revolt of Islam' Prometheus unbound', आदि आते हैं।

निराला की ही भांति 'शेली' का दार्शनिक दृष्टिकोण उनके गीतों में मिलता है कहीं कहीं कवि पूर्णतया रहस्यवादी हो उठता है पर वह शिक्षा प्रद कविता से घृणा करता था। Prometheus unbound' की भूमिका में उसने लिखा है 'Didactic poetry is my abhorence"

विद्रोही स्वर :—निराला और 'शेली' दोनो बचपन से ही क्रांतिकारी तथा स्वेच्छाचारी थे। 'शेली' के जीवन चरित पर दृष्टिपात करने से यह बात और स्पष्ट हो जाती है। इन दोनों महाकवियों की कविताओं में रुढ़ियों के प्रति बगावत तथा नवीनता मिलती है। दोनो ही तद्‍युगीन सामाजिक तथा राजनीतिक व्यवस्था से असतुष्ट हैं। निराला और 'शेली' दोनो ही प्रेम में बंधन नहीं स्वीकार करते। दोनो उन्मुक्त प्रेम के प्रशंसक हैं। निराला जी ने 'धारा' 'प्रगल्भ प्रेम' 'सम्राट् अष्टम् एडवर्ड के प्रति' कविताओं में अपनी भावना को क्रांतिकारी ढंग से व्यक्त किया है। पुरातनपंथी प्रेम में स्वच्छंदता नहीं प्रदान करते पर ये दोनों ही कवि प्रेम की हृदय जन्य एक भावना मानते है जिस पर अंकुश लगाना अत्याचार है। 'प्रगल्भ प्रेम' में निराला जी अपनी प्रेयसी का आवाहन करते हुए कहते हैं:—

आज नहीं है मुझे और कुछ चाह
अर्द्ध विकच रस हृदय कमल में आ तू
प्रिये छोड़ कर बंधनमय छदो की छोटी राह
गजगामिनि वह पथ तेरा संकीर्ण
कंटकाकीर्ण

इसी प्रकार कवि ने इंगलैंड के सम्राट् एडवर्ड को प्रेम के लिए गद्दी छोड़ देने पर बधाई दी है। प्रेम में त्याग होना चाहिए 'त्याग बिना निष्प्राण प्रेम है करो प्रेम पर प्राण निछावर'; की भावना को निराला जी ने व्यक्त किया :—

तुम नहीं मिले :—
तुम से हैं मिले हुए नव योरप अमेरिका
सौरभ प्रयुक्त !

सामाजिक व्यवस्था से असंतुष्ट होकर इन दोनो कवियों ने अपने हृदय के गुब्बार को बड़े तीखे ढंग से व्यक्त किया। निराला जी ने 'जूही की कली' में सामंती बंधनों में जकड़े मध्यवर्ग की मुक्तिकामना तथा नैसर्गिक प्रेम भाव को प्रतिपादित किया तो 'कुकुरमुत्ता' में शोषकों के विरुद्ध आवाज उठायी। 'उनकी लोक चेतना ने 'कुकुरमुत्ता' में गुलाब के बहाने पूंजीपतियों को चुनौती देकर सर्वहारा की श्रेष्ठता का स्वर मुखर किया। बरसात में कूड़े कर्कट की ढेर पर अनायास उग आने वाला कुकुरमुत्ता नवाब साहब के उद्यान में यत्न से पोषित और माली द्वारा सेवित गुलाब को दो टूक शब्दों में चुनौती देता है।'

अबे, सुन बे गुलाब,
भूल मत, गर पाई खुशबू, रंगो आब,
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट,
डाल पर इतरा रहा है कैपिटलिस्ट
× × × ×
तू नहीं मैं ही बड़ा !

इसी तरह 'गर्म पकौड़ी' 'मंहग मंहगा रहा' प्रेम संगीत आदि में लोक संस्कार उभरे हैं 'नए पत्ते' और 'अणिमा' में निराला जी एक व्यंग्यकार की मुद्रा में सामने आते हैं 'मास्को डायलाग्स' में समाजवादियों का पोल खोला तो 'खजोहरा' में वकीलों की खबर ली है। 'खुशखबरी' में कृत्रिम कला प्रेम पर व्यंग्य है तो 'प्रेम संगीत' में :—

जातीय दंभ पर आघात है

इसी तरह 'शेली' ने 'Queen Mal' तथा 'Revolt of Islam' में अपना विद्रोही स्वर मुखर किया है 'शेली' नरक के गंदे वातावरण में स्वतंत्र भाव से रहना स्वर्ग की चाकरी से अच्छा समझता है यही 'मिल्टन' ने भी कहा "Better to reign in hell than to serve in heaven"

'शेली' ने पुरातनता पर निर्मम प्रहार किया है भूत के प्रति जरा भी मोह उसके हृदय में नहीं है: —

"World is weary of the past
Oh might it die or rest at last"

निराला जी की ही भांति 'शेली' ने पुरोहित को ढोंग का अवतार बताया तथा राजा पर कड़े तीखे व्यंग्य बाण चलाया। शेली' का कथन है कि अच्छे आदमी न तो आदेश देते हैं और न आदेश का पालन करते हैं: —

"The man
Of virtuous soul commands not nor obeys
Power like devastating pestilence
Pollutes whatever it touches"

शक्ति एक छुआछूत की बीमारी है छूते ही यह व्यक्ति को भ्रष्ट कर देती है "प्रभुता नापाइ काहि मद नही" की उक्ति को 'शेलो' ने भी प्रतिपादित किया।

निराला जी ने पौराणिक आख्यानो को नए संदर्भ में देखा है। पर सबसे अधिक विद्रोही रूप निराला जी का हमें उनको छंद योजना में मिलता है।उनकी विषममात्रिक अतुकांत छंद योजना ने हिन्दी की परंपरा प्रेमी मेधा को चकाचौंध कर दिया। इसी तरह 'शेली' ने यद्यपि कोई नई छंद योजना नहीं प्रस्तुत की पर स्वच्छंतावाद को और सुगठित तथा परिपुष्ट किया।

इस प्रकार निराला और'शेली' दोनों ही विद्रोही हैं दोनों ही ने सामज की दुर्व्यवस्था से पीड़त कराहने वाले व्यक्तियों के प्रति सहानुभूति एवं संवेदना प्रगट की है। 'शेलीऔर' निराला दोनों ही आदर्शवादी है ये लोग एक आदर्श राज्य की कल्पना करते हैं जिसमें किसी प्रकार का अत्याचार अथवा शोपण नहीं रहेगा।

प्रकृति चित्रण :—निराला और 'शेली' का प्रकृति चित्रण बहुत कुछ एक दूसरे से मिलता जुलता है इस सम्बंध में मैंने विस्तार से 'निराला के प्रकृति चित्रण पर पाश्चात्य प्रभाव' शीर्षक निबंध में लिखा है इसलिए पिष्टपेषण के भय से पुनः इस पर विचार नहीं कर रहा हूँ।

करुणा की भावना :—निराला और 'शेली' दोनों ही अपने व्यक्तिगत जीवन में दुखी रहे, समाज की दयनीय दशा से दोनों क्षुब्ध थे इसलिए इन कवियों में करुणा का स्वर साकार रूप में प्रगट हुआ है। हृदय की वेदना जब वास्तविक रहती है तो पाठको के हृदय पर अपना एक अमिट प्रभाव डालती है। पारिवारिक

कष्ट से पीड़ित निराला जी का करुण हृदय सरोज की मृत्यु पर बोल उठा :—

हो गया व्यर्थ जीवन
मैं रण में गया हार
अपने भविष्य की रचना पर चल रहे सभी—
वन वेला से

धन्ये मैं पिता निरर्थक था
कुछ भी तेरा हित न कर सका।
हारता गया मैं स्वार्थ समर
× × × ×
दुख ही जीवन को कथा रही
क्या कहूँ आज जी नहीं कही।

इसी तरह 'शेली' ने अपने प्रिय मित्र 'कीट्स' की मृत्यु पर अपना प्रसिद्ध शोक गीत 'एडोनिस' लिखकर अपने हृदय की व्यथा को शांत किया। निराला जी की तरह 'शेली' भी दुखी होकर वह बैठता है:—

Out of day and night
Joy has taken flight

'शेली' की जीवन प्याली रुदन से भरी है निराला और 'शेली' जगत की समस्याओ तथा आध्यात्मिक बातों को भी सोचकर उलझ जाते हैं समाधान मिलना कठिन है इसलिए इनकी वेदना और भी करुण हो उठती है। सृष्टि की समस्या इनकी उलझन बन जाती है। 'शेली' कहता है :—

"Wny aught shold fail and fade that once is shown.
Why fear and bream and death and birth cast on the daylight of this earth srch gloom —
Why man has such scope .
For love and hate, dispondency and hope ?"

ये दोनों कवि मानवतावादी है इसलिए मानव के कष्ट से दुखी हो उठते हैं। उपेक्षित पर अपेक्षित 'भिक्षुक निराला की सहानुभूति का पात्र बनता है
वह आता :—

दो टूक कलेजे के करता पछतता पथ पर आता

इसी तरह ,दान' में जगत की व्यावहारिकता पर और इसके अंग प्रत्यंग में व्याप्त

'शेली' कवि होने के साथ-साथ काव्य मर्मज्ञ तथा साहित्य शास्त्री भी था उसे काव्य शास्त्र का उच्च कोटि का ज्ञान था इस सम्बन्ध में उसने अपना विचार यत्र तत्र प्रकट किया है विशेषकर अपने निबंध In defence of poetry में 'शेली' ने कविता के पक्ष में अपना मत प्रकाशित किया है। स्वच्छंदतावादी प्रायः सभी कवि कविता को चेतना प्रसूत (conscious effort) नहीं मानते। कविता स्वतः निर्झरित होने वाले उस झरने के समान है जिसे कोई रोक न सके। यह हृदय से स्वतः प्रसूत भावों का एक आवेग है। 'वर्ड्सवर्थ,' जो इस आन्दोलन (Romantic movement) का प्रणेता था कहता है कि कविता शांति के समय मधुर अनुभूतियों को अभिव्यक्ति प्रदान करने वाला एक आवेश है। It is the spontaneous overflow of powerful feelings ....It is an emotion recollected in tranquility" इसी तरह 'कीट्स' का कथन है कि कविता कवि से स्वतः प्रस्फुटित भावों की अभिव्यक्ति है वृक्ष में जैसे पत्तियाँ स्वयं निकल आती हैं वैसे ही कवि से कविता प्रस्फुटित होनी चाहिए। "Poetry should come as naturally to the poet as leaves to the trees if it does not come as naturally as leaves to the trees better it should not come at all."

(Keats)

इसी तरह 'शेली' 'वर्डसवर्थ' से राग मिलाते हुए कहता है कि कविता कवि के हृदय में उद्वेलित भावों की स्वतः अभिव्यक्ति है। 'वर्डसवर्थ' और 'शेली' में मुख्य अंतर यह है कि 'शेली' कविता को भावों की अनुभूति के समय ही तत्काल अभिव्यक्ति प्रदान करता है (At the spur of emotion) पर 'वर्डसवर्थ उन भावों को पचाने के बाद पुनः उनको स्मरण कर भावों को परिमार्जित रूप में व्यक्त करता है। 'शेली' अपने निबंध में लिखता है कि कविता बुद्धि प्रसूत शक्ति नहीं है जो स्वेच्छा से कोई किसी समय व्यक्त कर दे। कवि यह नहीं कह सकता कि अमुक समय में अमुक कविता लिखूँगा :—

"Poetry is not like reasoning a power to be exerted according to the determination of the will. A man can not say 'I will compose poetry' ... .This power arises from within like the colour of the flower which fades and changes as is developed and the conscious

portion of our nature is unprophetic either of its approach or its departure."

काव्य शक्ति सबमें नहीं हो सकती यह एक ईश्वर प्रदत्त प्रतिभा है प्रसिद्ध कवि 'मिलन' का भी यही मत है कविता एक कवि का ही गुण है यह एक टैलेन्ट (Talent) है। 'शेली' के मस्तिष्क या हृदय में ज्यों ही भाव उत्पन्न हुए कल्पना की लहरें उसके हृदय सागर में उठने लगीं वह कविता के वश में होकर कविता करने बैठ गया :—

"Whenever an idea, an emotion grew upon his brain, his breast heaved his frame shook his nerves quivered with the harmonious madness of imaginative conception."

कवि कल्पना चक्षु से सम्पूर्ण जगत को क्षण मात्र में देख सकता है तथा कल्पना के माध्यम से सम्पूर्ण सृष्टि का भ्रमण कर सकता है। 'शेली' अपने 'स्काई लार्क' की भांति ही स्वयं कल्पना लोक में विचरण करता था इस पक्षी के गाने को 'शेली' अपूर्व चिन्तित कला मानता है यही बात उनकी कविता के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है। कविता पहले से नहीं सोची जा सकती यह Unpremediatedart (अपूर्व चिंतित कला) है।

'शेली' का कथन है कि कवि निर्भीक होकर अपने भावों को पक्षी की ही भांति व्यक्त करता है उसे समाज तथा आलोचकों का भय नहीं है। वह 'स्काइ लार्क' की तुलना एक कवि से करते हुए कहता है :—

"Like a poet hidden
In the light of thought
Singing hymns unbidden
Till the wrold is wrought
To sympathy with hopes and
fears it heeded not—(To A skylark)

गीतिकार :— स्वच्छंदतावादी एवं छायावादी कविता में गेयता प्रचुर मात्रा में पाई जाती है इसलिए हमारे आलोच्य कवि भी तद्‌युगीन प्रभावों से वंचित न रह सके। जाफ़ाय गीति काव्य को काव्य का पर्यायवाची मानता है। उनमें उन सभी तत्वों का अन्तर्भाव होता है जो अह्‌लाद जनक एवं सजीव हों। 'गमर' के अनुसार गीतिकाव्य

वह अन्तर्निरूपिणी कविता है जो वैयक्तिक अनुभूतियों से पोषित होती है और जिसका सम्बध घटनाओं से नहीं भावनाओं से होता है तथा जो समाज की परिष्कृत अवस्था में निर्मित होती है 'हड्सन' के अनुसार वैक्तिकता की छाप गीति काव्य की सबसे बड़ी विशेषता है किन्तु वह व्यक्ति वैचित्र्य में सीमित न रहकर व्यापक मानवीय भावनाओं पर आधारित होती है जिससे प्रत्येक पाठक उसमें अभिव्यक्त अनुभूतियों तथा भावनाओं से तादात्म्य स्थापित कर सके। महादेवी वर्मा के अनुसार गीतिकाव्य वह है जो अपनी ध्वन्यात्मकता में गेय हो सके। गीति काव्य में प्रायः छः तत्व मिलते हैं :— (१) भावात्मकता (२) वैयक्तिकता (३) संगीतात्मकता (४) कोमल कांत पदावली (५) संक्षिप्तता (६) मुक्तक शैली।

निराला जी ने 'अनामिका', 'परिमल', 'गीतिका', 'अपरा', 'तुलसीदास', 'कुकुरमुत्ता', अणिमा', 'बेला', और 'नए पत्ते' आदि अनेक काव्य ग्रंथ सुमनों द्वारा वीणा वादिनी की आराधना कर साहित्य साधना की। गीति काव्य के क्षेत्र में आप हमारे सम्मुख विविध रूप में आए। गीति में विविधता की इन्द्रधनुषी शोभा आप के काव्य का अप्रतिम सौन्दर्य है।

छायावाद का प्राण तत्व 'सुन्दरम्' आप के सुन्दर चित्रों में सजीव हो उठा जिसमें सुकुमारता के साथ साथ भावात्मकता भी मिलती है। निराला जी के शब्दों में सन्ध्या सुन्दरी का सजीव रूप देखिए :—

> दिवसावसान का समय
> मेघमय आसमान से उतर रही है
> वह सन्ध्या सुन्दरी परी सी
> धीरे धीरे धीरे।

धीरे धीरे शब्दों की ध्वनि से एक नवोढ़ा की चाल ध्वनित होती है। प्रकृति का मानवीकरण तथा नारीत्व भावना का आरोप इनके गीति काव्य में प्रचुर मात्रा में मिलता है। 'जूही की कली' इस प्रकार की प्रथम रचना है। निराला जी के गीति-काव्य में राष्ट्रीयता की भावना मिलती है साथ ही व्यक्तिगत अनुभूतियों से व्यथित हृदय-प्रसूत भावों का उच्छ्वास भी मिलता है।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद जी तथा टैगोर इनके प्रमुखप्रेरक तत्व हैं इसलिए निराला जी के गीतों में गंभीर दार्शनिक तत्वों का समावेश हो जाता है आप बुद्धि से अद्वैतवादी तथा हृदय से भक्तिवादी दिखाई देते हैं 'जागरण' 'मैं और तुम' 'वेणु' आदि रचनाएं इस बात की साक्षी हैं। 'जागो फिर एक बार' में

ब्रह्म जीव विवेचन देखिए :—

"पर क्या है,
मुक्त हो सदा ही तुम
बाधा विहीन बंध छंद ज्यों
डूबे आनंद में सच्चिदानंद रूप।'

भावप्रधानता, चिंतनप्रधानता साधनाप्रधानता प्रकृतिचित्रण, रहस्य, प्रेम, सहानुभूति आदिआप के गीतों की विशेषता है।

समाज की दयनीय दशा से निराला जी क्षुब्ध हो उठते हैं 'भिक्षुक' एवं 'राह' में पत्थर तोड़ती हुई नारी आपकी सहानुभूति पा जाती है। कर्ण में आप ने दलित वर्ग के प्रति 'शेली' की ही भांति सहानुभूति प्रगट करते हुए कहा :—

पड़े सहते हो अत्याचार
पद पद पर सदियोंसे पद प्रहार

निराला की ही भांति 'शेली' ने भी अपने गीतों में जो मार्मिक स्थल उपस्थित किया वह वर्णनातीत है। दोनो कवि निराशावादी होते हुए भी घोर आशावादी हैं यथार्थ के मार्मिक चित्रण के साथ साथ निराला जी ने शोषण के अन्त की प्रबल कामना की है :—

एक बार बस और नाच तू श्यामा
समान सभी तैयार
कितने ही हैं असुर चाहिए कितने तुमको हार
कर मेखला मुंड मालाओं से बनो और अभिरामा
एक बार ....

शेली भी इस बात से आश्वस्त है कि रात के बाद दिन, संध्या के बाद ऊषा, पतझड़ के बाद बसंत क्रमानुसार आते रहते हैं इसलिए दुख के बाद सुख अवश्य मिलेगा :—

If winter comes can spring be far behind"?
(Ode to the west wind.)

निराला की भांति ही 'शेली' एक उच्च कोटि का गीतिकार है 'स्विनवर्न' ने 'शेली' को एक पूर्ण गायक माना है "He was alone" says Swinburne the perfect singing god, his thoughts words and deeds all sang together"

निष्करुणता पर तीखा व्यंग किया :—

"झोली से पुए निकाल दिए, बढ़ते कपियों के हाथ लिए देखा भी नहीं,
उधर फिरकर, जिस ओर जा रहा था,

वह भिक्षु इतर"

'शेली' समाज के लोगों को दुखी देखकर मान बैठता है कि करुणापूर्ण गानें हैं क्योंकि दुख ही हमारे भाग्य में वास्तविक गाने हैं वह 'स्काई लार्क' से कहता है:—

Yet if we could scorn
Hate and pride and fear
If we were things born
Not to shed a tear
I know not, how thy joy we ever
should come near.',

'शेली' समझता है कि मानो आह्लाद इस जगत से विदा हो गया है—

सदाशयता एवं सहृदयता के कण यत्र तत्र इन दोनों कवियों की रचनाओं में बिखरे पड़े हैं। निराला जी ने चिर दुखिता 'विधवा' को अपनी सहानुभूति प्रदान किया। 'कण' में दीन दलितों की दशा से दुखी होकर अपने हृदय के उद्गार व्यक्त किया। 'इलाहाबाद के पथ पर' पत्थर तोड़ती हुई मजदूरिन इनका ध्यान आकर्षित करती है तो 'शेली' का ध्यान समाज के अमानुषिक व्यवहार तथा पाशविक प्रवृत्तियों की ओर जाता है। इस प्रकार करुणा का स्वर व्यक्तिगत तथा सामाजिक अनुभूतियों के फलस्वरूप इन कवियों में आया।

इसी प्रकार कलापक्ष में भी दोनों कवियों में पर्याप्त समानता है। कविता तथा छंद योजना सम्बन्धी विचार निराला और 'शेली' के मिलते जुलते हैं। दोनों ही उच्च वर्ग के कवि और कलाकार हैं काव्य शास्त्र का ज्ञान इन दोनों ही कवियों को अच्छी तरह से था। पद्य के साथ साथ गद्य के क्षेत्र में भी आप लोगों ने सफल प्रयास किया है। गद्य में भी पद्य की सी सरसता तथा माधुर्य मिलता है। निराला जी ने उपन्यास क्षेत्र में अपनी प्रतिभा दिखाई है तो 'शेली' ने नाटक में। निराला जी में राष्ट्रीयता की भावना को विशेष स्थान मिला है और 'शेली' आदर्श राज्य का स्वप्न ही देखता रहा।

इस प्रकार दो युग एवं दो देशों में पैदा हुए इन दो कवियों को भाव धारायें समान गति से समान दिशा में प्रवाहित होती हैं। इन दो धाराओं का श्रोत भी

एक ही है। हमें तो पूर्व और पश्चिम के इन दो महान कलाकारों के स्वभावों में भी बहुत अंश तक समता दिखाई देती है। दोनों ही व्यापक मानवीय [illegible] और वैयक्तिक-स्वार्थ पराजय के प्रतीक हैं दोनों ही वहिद्वन्द्व और आंतरिक द्वन्द्व के शिकार रह चुके हैं। निराला और 'शेली' दोनों ही भावी समाज का स्वप्न देखते हैं वे आदर्श स्वप्न दृष्टा हैं। स्वर्ण पख से उन्मुक्त गगन में दानों ही स्वच्छंद भाव से विचरण करते हैं अमर-सत्य के परीक्षण के लिए अमर वृत्तियां उनकी अमर वाणी में आज भी उनकी यशोगाथा गा रही हैं जिन्हें काल के क्रूर थपेड़े अपने गर्भ में कभी भी समाहित न कर सकेंगे। हमारे आलोच्य कवि बहुत ही महान हैं उनकी प्रशंसा यह तुच्छ लेखनी नहीं कर सकती। वे जनसाधारण के हृदय में निवास करने वाले, अपनी भाव उर्मियों से आनंदित करते [illegible] कल्पना [illegible] पर चढ़ाकर हमें इस लोक से किसी लोक की यात्रा कराते हैं।

× × × ×

"महान लेखक प्रायः ही अपने भीतर प्रगति तत्व धारण करता है। प्रगति जन कल्याण है कितनी अधिक, कितनी कम, इसका निर्धारण प्रगतिशीलता के मान दण्ड कर सकते हैं। प्रगति संसार में सदैव रही है, जीवन में भी, साहित्य में भी ,किन्तु अब हम जिसे प्रगति-शीलता कहते हैं वह सामाजिक तथा राजनीतिक विश्लेषण के आधार पर स्थित है और उसी के आधार पर हम किसी कवि को तत्कालीन समाज और राजनीति में सापेक्ष रूप से रख कर उसकी आलोचना करते हैं।"

"छायावाद को हम संक्षेप में एक ऐसी कविता मानते हैं जिसके भावपक्ष में व्यक्तिवाद, अतृप्त-प्रेम, निराशा और वेदना, प्रकृति का मानवीकरण और तादात्म्य, सूक्ष्मभावों की अभिव्यक्ति, जिज्ञासात्मक रहस्य भावना आदि बातें मिलती है और भावपक्ष की इस नवीनता के कारण जिसके कलापक्ष में नवीन छंद विधान, अलंकार-विधान लाक्षणिक शब्दावली और प्रतीकों का प्रयोग होता है।"

उपर्युक्त दोनों युगों के निराला जी वलिष्ट कलाकार हैं क्योंकि दोनों युगों की मूल विशेषतायें उनके काव्य में निहित हैं।

प्यारेलाल सिंह व्याख्याता
प्रा० शिक्षक शिक्षा महाविद्यालय
मसौढ़ी (पटना)

———

महाकवि की स्मृति को मेरा प्रणाम

—: रमण शाण्डिल्य

'जला दे जीर्ण शीर्ण प्राचीन' वर दे वीणा वादिनी वर दें और 'वह आता, दोटूक कलेजे को करता पछताता पथ पर आता' प्रभृति रचनाओं के द्वारा ही मैं सर्व प्रथम श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला' नाम से परिचित हुआ था। मैं श्री सूर्यकान्त से उतना आकर्षित नहीं हुआ था जितना कि 'निराला' उपनाम से।

मात्र 'निराला' कहने भरसे मेरे मन में अनंत दृश्य और घटनाचक्र घूमने लगते थे उन दिनों। उनसे संबंधित सैकड़ों कथाओं से मैं परिचित हो चुका था निराला और मतवाला, निराला और पंत, निराला और सरोज, निराला और श्री सेठ महादेव प्रसाद, निराला और उग्र, निराला और महिषादल राज्य, निराला और उनकी साम निराला और पंडित जवाहर लाल नेहरु, निराला और गांधी जी निराला और एक बुढ़िया, निराला और एक भिक्षुक, निराला और उनका अभिनन्दन निराला और लीडर प्रेस, निराला और श्री महावीर प्र० द्विवेदी, निराला और श्री राहुल सांकृयायन, निराला और श्री जानकी वल्लभ शास्त्री, निराला और डा० राम विलास शर्मा, निराला और श्री महादेवी वर्मा, निराला और श्री वाचस्पति पाठक, नीराला और श्री श्रीनारायण चतुर्वेदी, निराला और श्री कमला शंकर, निराला और साहित्यकार संसद. निराला और गढ़ाकोला, महिषादल, कलकत्ता, लखनऊ, इलाहाबाद एक साथ अनेक व्यक्ति ! अनेक प्रसंग ! जुड़े हैं निराला की नियति में।

किसी ने लिखा है 'शिवकण्ठ से नीचे न जा पाया हलाहल सिंधु का, रस घूंट भर मैं नें पिया संसार मेरा जल गया !, किन्तु

अमियगरल शाकी-सीकर-रविकर
राग-विराग भरा प्याला
पीते हैं जो साधक उनका
प्यारा है यह मतवाला

की उदघोषणा करने वाले कवि को आमरण हलाहल पीते हुए अपने जलते संसार में जीना पड़ा। आक्षेप लगाया गया कवि विक्षिप्त हो गया है, अवचेतन की

स्थिति में लौट गया है।

विक्षिप्तावस्था में ही सही दारागंज में रह रहे महाकवि को देखने की प्रेरणा मुझे साहित्य अध्ययन के बाद ही मिली थी।

१९६१ का वर्ष, २४ सितम्बर की सुबह। इलाहाबाद का रेलवे जंक्शन। मैं ट्रेन से उतरकर दारागंज के लिए किसी की तलाश करता हूँ। एक इक्का गाड़ी जिसपर तीन और सवार पहले से विराजमान हैं, मैं उस ओर बढ़ता हूँ। इक्के-वान घोड़े को चाबुक मारता है और घोड़ा छलांगे मारता बढ़ने लगता है। सूरज का अता-पता नहीं है। शीत-लहरी चल रही है आकाश बादलों से घिरा है और धरती पर धुंध! हवा में ठंढापन अधिक है।

मेरे लिए सब कुछ नया-नया है। हम जिस सड़क से जा रहे हैं वह ऊँची है लगता है बाँध हो। दारागंज पहुँचने पर इक्केवान मुझे एक गली की मोड़ पर उतार देता है। मैं पैसे दे बगल की एक दूकान पर महाकवि के बारे में अधिकाधिक विवरण प्राप्त करता हूँ।

मन सशंकित है और भयभीत भी। पूर्व सुनी हुई दंत कथाओं से दिल बार-बार हिलता-डोलता है। क्या मिलने वाले को सचमुच महाकवि गाली देते हैं? क्या पत्थर फेंक कर अपने नजदीक आने से रोकते हैं? दूसरों को देखते ही अनाप-सनाप बकते हैं।

आखिरकार महाकवि को यह सब क्यों करना पड़ता है? मैं तो मात्र उनका एक छोटा भक्त हूँ, काव्य प्रेमी महाकवि के दर्शन का अभिलाषी। क्या मुझे सचमुच महाकवि के निवास-स्थान की ओर नहीं जाना चाहिए? उस हलवाई की बातें 'मूड खराब होने से नजदीक आने वालों को खदेड़कर मारते हैं' या 'मूड अच्छा होने पर सुंदर स्वागत भी करते हैं।' मन में लिए गुन-धुन करता मैं बढ़ता ही गया उस गली में।

'सोपान' ठीक-ठीक याद नहीं, लोकहितकारी पुस्तकमाला कार्यालय का साइनबोर्ड भी एक जगह लटका पाया। गली में आने जाने वाले इक्के-दुक्के ही थे। गली संकरी थी, फिर भी रिक्शा-साइकिल तो चलने लायक थी ही। गंदगी से जी घबराता जरूर था।

और मैं अब उस मकान के सामने था जिसमें महाकवि वर्षों से रुग्णावस्था में पड़े थे। यहीं रहते हैं महाकवि गली से गुजर रहे एक अपरिचित ने कहा मेरे पूछने पर।

उस गली वाले मकान के बरामदे में मुझे लगभग आधा घंटा तक ठहरना पड़ा। खिड़की से झांकते मुझे भय हो रहा था और आवाज देकर मैं किसी अनिष्ट को बुलाना नहीं चाहता था। मेरे ख्याल में वह मकान पश्चिमाभिमुख था। उसका दरवाजा उस समय भीतर से बंद था।

लम्बी प्रतीक्षा के बाद मकान का द्वार खुला और उसके भीतर से विशालकाय मूर्ति प्रकट हुई किन्तु मैं आश्चर्य चकित रह गया। मुझे देखते ही उनके पैर घर के भीतर ही मुड़ गये और दरवाजा पूर्ववत बन्द। मेरे हृदय की धड़कन बढ़ने लगी थी घर के भीतर से निकल रही बुदबुदाहट 'मैं आजकल किसी से नहीं मिलता' को सुनकर।

जिस समय उन्हों ने घर का द्वार खोला था मैं बरामदे में रखी हुई चौकी से उठ कर खड़ा हुआ था। उस विशालकाय पुरुष की आकृति रुग्णावस्था को प्राप्त थी। सिर में बाल थे, किन्तु बड़े नहीं। दाढ़ी कुछ दिनों की बढ़ी हुई थी। द्वार खुलने और बंद होने में मिनट भर की भी देर नहीं हुई थी। मैं तो पहले से ही उनके संबंध में तरह–तरह की बातें सुन कर भयभीत था, जब मैं ने देखा कि महाकवि ने मुझे देखते ही दरवजा बंद कर लिया है तो निराशा के साथ-साथ मेरे मन में यह ध्यान भी आई कि मैं सम्भवतः उपयुक्त समय पर नहीं आया।

भीतर की फुसफुसाहट तेज होती जा रही थी 'मैं किसी से नहीं मिलता'

. मैं ......

महाकवि का 'मूड' शायद ठीक नहीं, यह सोच मैं वहाँ से दूर हट गया। मैं ने जाते हुए देखा महाकवि खिड़की के रास्ते बाहर झाँक रहे थे। मैं वहाँ से हटा ही था कि द्वार पुनः खुला और महाकवि बगल के शौचालय में प्रविष्ट हो गये।

गली से आने-जाने वाले मुझ अपरिचित को जो महाकवि के दर्शन के लिये बाहर खड़ा था निहारते घूरते बढ़ जाते। एक सज्जन ने प्रश्न किया 'आप कहाँ से आये हैं? क्या आप निराला जी से मिलना चाहते हैं?

'मुजफ्फरपुर, बिहार से आया हूँ और महाकवि के दर्शन का पूर्ण लाभ उठाना चाहता हूँ।', मेरा उत्तर था। वे कहने लगे - 'वे तो किसी से नहीं मिलते आजकल। मूड में होने पर बात दूसरी है।'

उस सज्जन से मेरी बातचीत हो ही रही थी कि शौचालय का द्वार खुला और महाकवि उस से बाहर निकल बरामदे में चहलकदमी करने लगे। मुझे अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ जब उन्होंने कहा 'इधर आओ।'

जिस आदमी से मैं गली में उस मकान के ऊपर खड़ा-खड़ा बात कर रहा था उसने सहमति दी और मैं डरते-डरते उधर [illegible] जाकर मैं ने उस महान विभूति के चरण छुये। महाकवि का दूसरा आदेश था 'बैठ जाओ।' इतने भर से

मैं अपने भीतर इतना अधिक पुण्यदान कर रहा था जितना प्रयाग आकर लोग संगम में स्नान करने के बाद भी शायद न प्राप्त करते हों।

महाकवि की चहलकदमी जारी थी। 'तुम कहाँ से आये हो?'

मुज्जफरपुर से आया हूँ।

'शास्त्री कैसा है?' मैं गुन धुन में पड़कर कुछ देर चुप ही रहा, मुझे निहारते हुए उन्होंने फिर पूछा 'जानकी वल्लभ को नहीं जानते हो क्या?'

जी जानता हूँ उन्हें। वे तो गुरुदेव हैं मेरे। वे सकुशल हैं।

इतनी बात सुन वे फिर भभक पड़े 'तुम झूठ बोलते हो। वह बीमार है। इसी लिए यहाँ नहीं आया है।' और कारण नहीं, इसी तरह अनेकानेक बात बोलते रहे।

और एकदम तीव्र गति से घर के भीतर जा कर उन्होंने द्वार बंद कर लिया।

भीतर खिड़की के सामने खड़े होकर उन्होंने एक के बाद कई प्रश्न पूछे 'तुम ठीक-ठीक बोलो, कहाँ से आये हो? यहाँ क्यों आये हो? जानकी वल्लभ कहाँ रहता है आजकल? वह तुम्हारा गुरुदेव कैसे है?

मैं झूठ नहीं कह रहा हूँ आपसे। अपने आराध्य से कैसे कोई झूठ बोल सकता है। मैं मुज्जफरपुर के रामदयालु सिंह महाविद्यालय का छात्र था। शास्त्री जी वहीं मेरे गुरुदेव थे। वह आजकल भी चतुर्भुज स्थान में ही रहते हैं। मैं बिलकुल सत्य कह रहा हूँ आप के दर्शन के लिए ही मैं यहाँ आया हूँ और कोई दूसरा प्रयोजन नहीं है। मैंने दृढ़ स्वर में ये बातें कहीं महाकवि से।

इतने में ही वहाँ ५-६ युवकों का एक जत्था आया जिनके कन्धे से कई कैमरे लटक रहे थे और हाथ में थीं सबों के डायरियाँ।

कवि का शमन्तस्वर घोर गर्जन में परिवर्तित हो गया। वे जोर-जोर से कह रहे थे 'ये सब चोर, बदमाश हैं। फोटो लेने आये हैं। मैंने प्रधान मंत्री से कह दिया है किसी भी फोटोग्राफर को मेरे पास तक नहीं आने दें। ...

भागो! भागो!! भागो!!! ...... भाग जाओ यहाँ से। तुम जाकर शास्त्री से कह दो मुझे लोग परेशान करते हैं। मैं यहाँ नहीं रहूँगा। मैं उसके पास आना चाहता हूँ। ... वो ...वो... वो... देखो। आ रहा है। आ गया, 'आ गया वो... ....वो........मुझे फँसाने आ गया है। मेरा चित्र लेकर मुझे फँसायेगा। मैं नहीं दूँगा... ....आने ... .. आने........। ओ........ ओ... ... ओ लड़के! ...तुम शास्त्री से जा कर कह दो—मैं जल्द ही आ रहा हूँ। आने........ आने ... आने।

खुली खिड़की बन्द हो गई थी। मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय के उन छात्रों के साथ लौट गया मन ही मन दुबारा उन्हें प्रणाम कर।

१५ अक्तूबर ६१ की संध्या। मैं कई दिनों से हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के अतिथि भवन सत्यनारायण कुटीर' में अस्वस्थ पड़ा था। आज तबीयत ठीक थी। शाम को निकला रोटी खाने के लिए। एक पान की दूकान पर इलाहाबाद आकाशवाणी केन्द्र से समाचार बुलेटिन प्रसारित हो रहा था। बुलेटिन का अन्तिम वाक्यांश था 'महाकवि का महाप्रयाण।' पान वाले से पूछा तो सारी स्थिति से अवगत हुआ। सन्न रह गया। महाकवि श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी, 'निराला' इस धरा धाम से आज सवेरे ९ बज कर कुछ मिनटों हीं पर उठ गये। उनकी कीर्तिभरशेष रह गई। अत्यन्त दुख हुआ इसलिए कि इस दुखद समाचार से शाम छः बजे मैं परिचित हो सका था। उस दिन, दिनभर कहीं, निकला नहीं था और 'सत्य-नारायण कुटीर' से अभी बाहर आया तो यह वज्राघात !

मैं रोटी की दूकान न जा कर दारागंज वाली बस को पकड़ा। पहुँचा गंगा तट। बाँध के नीचे चिता अब भी धू-धू कर जल रही। लोग-बाग अब भी वहाँ थे। कुछ लकड़ियाँ मैं भी रख आया उस धुंधुआती चिता पर। मेरे सामने जल रही थी महा कवि की चिता और मेरे मन में जल रहे थे अनेक प्रश्न ! प्रश्न जिनके उत्तर नहीं। जिज्ञासाएं जिनका सामाधान नहीं।

'दुख ही जीवन की कथा रही' की वेदना हृदय में गाढ़ी होती गई। 'सरोज स्मृति' शीर्षक रचना मन में पसरती रही। मैं गंगा स्नान के पश्चात भीगे कपड़ों में बस से 'सत्यनारायण कुटीर' के लिए लौट रहा था।

इस वर्ष १५ अक्तूबर को महाकवि के स्वर्गारोहण के दस वर्ष पूरे हो जायेंगे। मैं चाहूँगा 'निराला-परिषद' 'निराला-पञ्चाननी' के लिए आगे आए।' 'निराला संस्थान' का मुख्य उद्देश हो निराला साहित्य का विश्लेषण, महाकवि के अप्रकाशित साहित्य का प्रकाशन, उनके हाथ से लिखे गये, मूल पत्रों का संग्रह सम्पादन, प्रकाशन, महाकवि से संबंधित समस्त साहित्य (उनकी अपनी लिखी हुई और उनपर दूसरों की लिखी हुई सामग्रियों का) का संग्रह, उनके चित्रों हस्तलेखों, पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित उनकी विविध सामग्रियों का संकलन, सम्पादन, और सबसे बढ़कर तो यह कि 'निराला-संग्रहालय' का निर्माण।' यह संग्रहालय उनकी जन्म-भूमि गढ़ाकोला में हो तो अति उत्तम। 'निराला संस्थान' का केन्द्रीय कार्यालय सुविधानुसार कहीं बने।

यहाँ अब मैं उन पत्रों पर आता हूँ जो निराला से संबंधित हैं। श्री बनारसी दास चतुर्वेदी के नाम श्री प्रेमचन्द जी ने कभी लिखा था—

सरस्वती प्रेस, बनारस
३ अक्तूबर १९३२

प्रिय बनारसी दास जी,

……………मैंने निराला का लेख नहीं पढ़ा। मुझे लगता है कि आप इन छोटी-छोटी बातों के लेकर खामखाह इतना परेशान होते हैं। लोग व्यर्थ ही हमको वाद विवाद में खींचने की कोशिश करते हैं। अपनी तरफ से उन्हें न्योता क्यों दिया जाय ?……………

आपका :—
धनपत राय

× × × ×

दूसरा पत्र—

सरस्वती प्रेस, बनारस
१४ नवम्बर १९३२

प्रिय बनारसी दास जी, नमस्ते !

…………मैं इस बात से इन्कार नहीं करता कि साहित्यिकों में कुछ ऐसे लोग हैं, जो आपकी अवहेलना करते हैं और आपकी सच्ची लगन के लिए आपको अपना उचित प्राप्य नहीं देते।…… …मगर किसकी बुराई करने वाले लोग नहीं हैं। खुद मेरे चारों तरफ बुरा-भला कहने वाले लोग जमा हैं जो मुझ पर चोट करने का एक भी मौका हाथ से न जाने देंगे।…… ……ऐसा लगता है कि आप मजाक में की गयी छींटेकशी को जरा ज्यादा महत्व देते हैं। मैं मानता हूँ कि मैंने ढुंढिराज का लेख नहीं पढ़ा और न खैराती खां का। आपको पता ही होगा खैराती खां ने 'आज' में मेरी अच्छी खबर ली है। मगर मैंने उसको बड़ी दिलेरी के साथ कबूल किया।

…………साफ दिल से की गयी छींटेकशी का आपको बुरा न मानना चाहिए अगर आप इतने तुनुक मिजाज हो जायेंगे तो आप अपनी बुराई करने वालों को और प्रोत्साहन देंगे कि वह आपको चुटकी काटें। मुस्कुराते हुए चेहरे के साथ उनका सामान कीजिए।…………मतभेद सदा रहेंगे लेकिन उसकी चिन्ता हम क्यों करें। सब लोग मेरी प्रशंसा नहीं करेंगे और न यही कहा जा सकता है कि मैंने जो कुछ लिखा है, सबका सब निर्दोष है।…………गलत-फहमियाँ घनिष्ट सम्पर्क से ही दूर हो सकती हैं।…… ………

आपका :—
धनपत राय

यह पत्र मेरी दृष्टि में एक बहुत बड़ा दस्तावेज है। श्री प्रेमचन्द ने दिलेरी के साथ इसे स्वीकार किया है।

श्री सुमित्रानन्दन 'पंत' और श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' के सम्बन्ध विवादास्पद रहे हैं। श्री बच्चनजी के नाम लिखे गये पत्र में श्री पंत जी फरमाते हैं—

१८/७ वां, क० गॉ० मार्ग
प्रयाग
२६-११-६०

प्रिय बच्चन,

…… .. ……कल पता चला कि बाँके बिहारी भटनागर साहब ने सा० हि० के सम्पादकीय में व्यर्थ का हमलोगों पर विषवमन श्री निराला जी के संबंध में किया है। क्या कहा जाय, लोग ऐसा उत्तरदायित्व हीन कार्य करते हैं और लोगों में गलत फहमी फैलाते हैं। महादेवी जी को भी इसका बहुत दुःख है। आशा है तुम प्रसन्न हो।

सप्रेम,

सा।ईंदा
(श्री सुमित्रानंदन पंत)

श्री प्रेमचन्द जी के पत्र में 'गलत-फहमियाँ' शब्द का प्रयोग है और श्री पंत जी ने 'गलत-फहमियों' का प्रयोग किया है। किन्तु यहाँ यह प्रश्न उठता है श्री निराला जी के संबंध में हुई गलत-फहमियों को मिटाने के लिए उनके जीवन-काल में किसने प्रयत्न किया ?

"पंत के सौ पत्र" में पत्र सख्या ८५, ८७, ८८, ८६ में भी निराला जी का उल्लेख श्री पंत जी ने किया है।

स्व० श्री शिवपूजन सहाय जी का यह पत्र तो निराला जी के साथ किये गये दुर्व्यवहार का कितना बड़ा प्रमाण-पत्र है ! क्या शिवजी ने झूठ लिखा था ? शिवरात्रि संवत् १९९९ को श्री राम विलास शर्मा जी के नाम लिखे गये पत्र में शिवजी लिखते हैं —

"श्री निराला जी के विषय में मैं यदि लिखूंगा तो हिन्दी संसार उसे पसन्द नहीं करेगा। लोक रुचि के लिए वह रोचक न होगा, सह्य भी न होगा। फिर रँगभरी एकादशी, १९९९ के पत्र में कठिनता यही है कि कुछ स्वर्गीय मित्रों की आत्मा को भी कष्ट पहुँचाना पड़ेगा, तभी कटु सत्य प्रकट हो सकेगा। जीवितों से अधिक उन्हीं की चिन्ता है। अच्छा, अब तो जो भी हो।" .... " उनके विरुद्ध

मेरी सहायता न ले तो अच्छा होगा। कारण कितने ही ... सत्य प्रकट करने पड़ेंगे, जिनसे बहुतों का आत्महनन होगा और कुछ लोगों की आत्मा मुझे शाप देगी तथा जीवित सज्जन मानहानि के लिए मुझे उजाड़ डालेंगे। मैं दुनिया में बसने न पाऊँगा। 'कलकत्ता वाले साहित्यिक और असाहित्यिक जीवन' के विषय में लिखते समय ज्वलन्त सत्य को छिपाना कष्ट कर प्रतीत होगा, पर उसे व्यक्त करना भी मौत बुलाना होगा।" नीचे वाला अंश भी महाशिवरात्रि १६६६ के पत्र का ही है।

अब यहाँ प्रश्न उठता है कि वे 'स्वर्गीय मित्र' कौन थे ? वे 'जीवित सज्जन' कौन हैं ? वे 'बहुत' कौन-कौन थे जिनका 'आत्महनन' होगा ? क्या 'निराला-परिषद' इस संबन्ध में खोज और छान बीन करेगी ? उन सभी 'कटु सत्यों' को प्रकाश में लाने का कार्य करेगी जिससे निराला जी का जीवन, दुखमय बना रहा ?

अंत में वे दो पत्र प्रस्तुत हैं जिनके लेखक स्वयं निराला जी हैं। ऐसे और कितने ही पत्र इधर उधर होंगे जिनसे निराला जी के जीवन-संघर्ष के सबंध में अधिकाधिक जाना जा सकता है।

संस्मरण-ग्रन्थ के प्रकाशन के बाद 'निराला-परिषद' उनके पत्रों के सम्पादन प्रकाशन को अपने हाथ में लेगी। वे दो पत्र इस प्रकार हैं :—

प्रिय भाई शिवपाल सिंह,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा नुकसान होता है। यह हम नहीं चाहते, तुम जो चाहो ले लो।

—सूर्यकांत त्रिपाठी

२२-७-३५

प्रिय शिवपाल सिंह जी, दारागंज, इलाहाबाद,

१५-५-४५

डिगरी के रु० का इन्तजाम हमने कर लिया है। अभी यहाँ किताबों के काम से उलझे हैं। इससे फुर्सत पाने पर जमा करने जायेंगे। अपने समाचार दीजिए। यहाँ कुशल है। इति।

आपका,

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

उपर्युक्त दोनों पत्र निराला जी की आर्थिक अवस्था के रेखा चित्र हैं। ऐसे ही और भी महत्वपूर्ण पत्र गढाकोला में श्री लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी जी के संग्रह में सुरक्षित हैं। आचार्य श्री जानकी वल्लभ शास्त्री (निराला-निकेतन, चतुर्भुज स्थान मुजफ्फर पुर) जी ने 'महाकवि निराला' (सम्पादित ग्रंथ) में उनके कुछ पत्र संकलित किये हैं। महाकवि की स्मृति को मेरा शत-शत प्रणाम।

———

निराला जी का प्रथम और अन्तिम दर्शन

नारायण भक्त

गली हरिमंदिर
पटना सिटी।

२३ नवम्बर सन् ६० को मैं प्रयाग गया था। मन में बहुत दिनों से निराला जी के दर्शन की लालसा थी। उनकी अस्वस्थता का समाचार पढ़ कर तबीयत और भी बेचैन होती कि क्या मैं महाकवि, महाप्राण के दर्शन पा सकूँगा? कैसे होंगे वह? क्या मैं उनके पास जा भी सकूँगा? लोग मुझे वहाँ पर पहुँचने भी देंगे, ऐसी अनेक आशंकाएं उत्पन्न होतीं।

दूसरे दिन यानी २४ नवम्बर को प्रातः ही मैं 'बालसखा' संपादक पं० लल्ली प्रसाद पाण्डेय के दारागंज स्थित निवास पर पहुँचा। इधर-उधर की कुछ बातें करके संगम् स्नान करने गया। संगम् स्नान करके वापस लौट रहा था, तभी मेरी नजर शिवपूजन बाबू पर पड़ी। उनको यहाँ पाकर मेरी यह धारणा दृढ़ हो गयी कि बाबूजी अवश्य ही निराला जी को देखने पटने से आये हैं। पहले ही सुन चुका था कि बिहार के दो साहित्यकारों को महाकवि बहुत मानते रहे हैं और उनमें दोनों (अब स्वर्गीय) आचार्य नलिन विलोचन शर्मा और दूसरे आचार्य शिवपूजन सहाय थे। झपटकर तैयार होकर पाण्डेय से ही निराला जी का पता पाकर, चल पड़ा। मार्ग में प्राचीन समय के अनेक प्रासाद, मंदिरों को देखते हुए महाकवि के निवास-स्थान पर पहुचा।

'कला-निकेतन' का साइनबोर्ड पढ़ कर जैसे ही मुड़ा था कि शिवपूजन बाबू को विराजमान देखा। अब मेरी आँखे निराला जी को खोजने लगीं। बीमारी ने उनके शरीर को क्षीण बना दिया था। फिर भी नेत्रों की ज्योति और विशाल बाहु उनको पहचानने में मुझे तनिक भी असुविधा न हुई। उनके दर्शन पाकर कृतार्थ हुआ, माथा टेक दिया महाकवि के चरणों में और कुछ क्षण वहीं पर मौन खड़ा रहा।

स्मार्त्त निराला

महाकवि अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा मे थे। सहज मुस्कान से, मुझे वैठने का आदेश देकर, कुशल-क्षेम और प्रयाग आने का प्रयोजन पूछा। संक्षेप में मैंने उनके उत्तर दिया। उनके सुपुत्र प० रामकृष्ण त्रिपाठी मेरे नजदीक ही बैठे थे। उनसे परिचय हुआ। पिताजी के स्वास्थ्य के बारे में बतलाया। रामकृष्ण जी ने कहा कि पिता जी शिवपूजन बाबू (उन्हें वाबूजी कहते थे) के आने मे आज इतने प्रसन्न हैं कि क्या कहना। आखिर दोनों बालसखा ही तो ठहरे। मिलने में आनंद क्यों न हो।

थोड़ी देर ठहरने पर ही मुझे ऐसा लगा कि महाकवि, अपने देखने आने वाले स्नेहियों से कितने प्रसन्न होते हैं। मेरे यह अनुरोध करने पर कि आप अपने हस्ताक्षर दें, महाकवि तैयार न हुए। अधिक जोर देना उचित न समझकर मैं चुप रहा। फिर एकाएक बावूजी की ओर देख कर कहने लगे, क्या उन्हें मैं अपने हस्ताक्षर दे दूँ ?

शिवपूजन बावू ने अपनी स्वीकृति दे दी। महाकवि मेरी डायरी पर लिखने लगे और मेरा मन आनंद के सागर में गोते लगाने लगा उनके वाद बावूजी ने अपने हस्ताक्षर किये। कमला शंकर सिंहजी मेरे इस प्रयास पर बहुत प्रसन्न दीख पड़े। मेरे एक चित्र खींचने के अनुरोध पर महाकवि तैयार हो गये और शिवपूजन बावू को अपनी शय्या पर बगल में बिठा कर फोटो खिंचवाया।

अधिक देर बैठना उचित न समझ कर, हालांकि उनके निकट से टलने की मेरी इच्छा तनिक भी न थी, अपना सामान ठीक करने लगा। निराला जी एकदम भांप गये। बोले, अभी आप रुकिये। भोजन करके जाइएगा। रामकृष्ण जी और कमला शंकर जी ने यही बात दुहरायी। मैं रुक गया। थोड़ी देर में शिवपूजन बावू के साथ हम लोग भोजन करने ऊपर गये। बहुत प्रेम से भोजन हुआ। बावूजी के विनोद से सभी अत्यन्त प्रसन्न हुए। तत्पश्चात् महाकवि के आगे सिर नवा कर प्रयाग के अन्य स्थानों को देखने निकल पड़ा। उनके दर्शन से कृतार्थ हुआ, मन की साध पूरी हुई। कुछ देर का सानिध्य मेरे जीवन इतिहास का एक सुनहरा पृष्ठ है।

युग-मन्दिर उन्नाव में निराला जी

राम कुमार मिश्र,

खजुहा लखनऊ

अपने कुछ साहित्यिक मित्रों से मैंने सुना था कि महाप्राण निराला किसी समय उन्नाव में काफी समय तक सुप्रसिद्ध कवयित्री श्रीमती सुमित्रा कुमारी सिन्हा के घर अतिथि के रूप में रहे थे। अतः बहुत दिनों से प्रबल इच्छा थी कि सुमित्रा जी से भेंट करके निराला जी के मूल्यवान संस्मरण एकत्र करूँ जिन्हें उस महामानव की महानता को निकट से देखने परखने का अवसर मिला था।

और एक दिन जब आकाशवाणी (लखनऊ) पहुँच कर मैंने उनसे अपना मन्तव्य प्रकट किया तो दूसरे दिन प्रातः उन्होंने अपने घर आने को निमंन्त्रित किया। जहां वे और उनके पति चौधरी साहब निराला जी के विषय में अनेक सस्मरण सुना सकते थे।

जब दूसरे दिन मैं उनके रीवर बैंक कॉलोनी स्थित निवास पर पहुँचा तो चौधरी साहब को यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि मैं उनके अनन्य मित्र निराला जी के संस्मरण सुनने आया हूँ और चलने फिरने में कष्ट करते हुए भी वे अपने भतीजे का सहारा लेते हुए ड्राइंग रुम में आए और प्रसन्नता पूर्वक निराला जी के विषय में जानकारी देना स्वीकार किया। निराला जी का प्रसंग छिड़ने पर वे उसमें इतने लीन हो गये कि अधिकांश संस्मरण उन्होंने ही सुनाए। सुमित्रा जी को एकाध बार से अधिक उस बीच में न बोलना पड़ा और वे मजे से गृहकार्य निपटाती रही तथा यह कार्य सुविधापूर्वक सम्पन्न होता रहा।

चर्चा का आरम्भ करते हुए उन्होंने कहा कि बहुत सी स्मृतियाँ हैं निराला जी के विषय में, बहुत सारी घटनाएँ हैं उनसे सम्बद्ध। उनमें से कौन सी छोड़ूं और कौन सी बताऊं यह तय करना मेरे लिए बड़ी मुश्किल बात है। फिर कुछ देर तक वे बीते जमाने में खोये रहे, स्मृति का धुंधलका साफ हुआ, मुश्किल धीरे-धीरे आसान हुई और बातों का सिलसिला चल निकला।

उन्होंने बताया कि सन् ४३-४४ के आसपास की बात होगी जब सुमित्रा जी का काव्य संकलन वर्षगांठ' प्रकाशित होने जा रहा था। विचार किया गया कि

उसकी भूमिका निराला जी से लिखने का अनुरोध किया जाय। पुस्तक की पाण्डुलिपि भूमिका लिखने के आग्रह के साथ निराला जी को भेज दी गयी। उत्तर में उन्होंने भूमिका लिखना स्वीकार करने की सूचना दी। पर दिन पर दिन बीतते किन्तु अपनी मनमानी प्रकृति के कारण वे इस कार्य को शीघ्र न कर सके। कुछ और तकाजे हुए और पुस्तक की दूसरी पाण्डुलिपि उन्हें भेंट की गयी क्योंकि प्रथम कहीं इधर-उधर हो गई थी और तब उन्होंने फट से भूमिका लिख दी। पुस्तक सुमित्रा जी के अपने प्रकाशन 'युग-मन्दिर उन्नाव' से प्रकाशित हुई।

यह था चौंधरी परिवार का निराला जी के निकट सम्पर्क में आने का सूत्रपात। सम्पर्क धीरे धीरे घनिष्टतर होता चला गया और कलान्तर में निराला जी ने चौधरी परिवार का आतिथ्य स्वीकार कर काफी समय तक वहीं रहना स्वीकार किया और सन् १६४५-४६ के आस-पास दो-ढ़ाई वर्ष तक वे युग मन्दिर उन्नाव में रहे।

चौधरी साहब ने आगे बताया कि जिस कमरे में निराला जी रहते थे वह संयुक्त बैठक का काम देता था और निराला जी ने उसका काल्पनिक विभाजन कर लिया था कि अमुक हिस्सा स्वयं उनका और उनसे मिलने आने वालों का, दूसरा हिस्सा सुमित्रा से मिलने आने वालों का और तीसरा हिस्सा चौधरी साहब से मिलने आने वालों का। जब कोई आता था तो पहले उससे वे यही पूछते थे कि किससे मिलने आये हैं फिर उसे यथा स्थान बिठा कर स्वागत सत्कार का प्रबन्ध करते थे तथा किसी अन्य से मिलने आया होता था तो उसे सूचना भिजवा देते थे। किसी के आने पर कुशलक्षेम के पश्चात् सर्वप्रथम वे जलपान आदि से उसका आतिथ्य करने का प्रबन्ध करते थे। इस नियम का वे बड़ी दृढ़ता से पालन करते थे।

पाकशास्त्री निराला

निराला जी के विषय में और आगे बताते हुए उन्होंने कहाकि वैसे तो निराला जी की ख्याति एक अत्यन्त महान साहित्यकार के रूप में ही है किन्तु व्यावहारिक जीवन में वे बिल्कुल कोरे न थे जैसे कि बहुत साहित्यकार होते हैं। वरन् इसके विपरीत वे कई अन्य जीवनोपयोगी कलाओं में बड़े दक्ष थे। यहाँ तक कि पाक शास्त्र तक पर उनका अच्छा दखल था जिसमें अधिकांश पुरुषों के अनाड़ीपन के कारण होने वाली दुर्दशा ने हमारे हास्य साहित्य की बड़ी श्रीवृद्धि की है। इस विषय में उनका ज्ञान बड़ा पाण्डित्यपूर्ण था वे अच्छा खाना, खाना ही नहीं बल्कि

उसे बनाना भी जानते थे और दूसरों को भी यह कला बताते रहते थे। चौधरी साहब की बड़ी पुत्री विन्नी जी के अब पुत्री कीर्ति चौधरी के नाम से विख्यात कवयित्री और कहानी लेखिका हैं, उनके बचपन में सारी पाक विद्या स्वयं निराला जी ने सिखाई थी। एक बार आलू की तरकारी में तेल कच्चा रह गया था तो निराला जी ने न केवल इस ओर संकेत किया बल्कि बताया कि तरकारी तीन प्रकार के तेलों में बनती है, कच्चा, अधपका और पूरी तरह से पका हुआ तेल और तीनों तरह से बनी तरकारी के स्वाद भिन्न-भिन्न होते हैं, यह बताने के लिए उन्होंने दूसरे दिन स्वयं तीनों प्रकार के तेलों में तरकारी बना कर सब को खिलाई।

बड़ी सूक्ष्म ग्राही इन्द्रियाँ

उनकी ज्ञानेन्द्रियों की शक्ति भी बड़ी बढ़ी चढ़ी थी। समय आदि के सम्बन्ध में उनका अनुमान बड़ा अद्भुत होता था। आमतौर पर शोरवा पकने में लगभग पैंतालीस मिनट का समय लगता है, वे उसे पकवाने को रख देते थे और स्वयं खाट पर लेट जाते थे तथा पैंतालीस-साढ़े पैंतालीस मिनट होते ही उठ बैठते थे। उनके अन्दाज के मुताबिक शोरवा बिल्कुल तैयार मिलता था। इसी प्रकार बहुत बार ऐसे अवसर आये जब उन्होंने घड़ी देखे बगैर समय का बिलकुल ठीक अन्दाजा दिया था। ऐसे ही उनकी श्रवण शक्ति भी बड़े मार्के की थी। चौधरी साहब ने बताया कि अक्सर ऐसा होता था कि हम लोग साथ-साथ घूमने फिरने निकलते थे। सड़क सुनसान दिखाई पड़ा करती थी। पर निराला जी कहते थे किनारे हट जाओ मोटर आ रही है। हम लोगों को आश्चर्य होता था क्योंकि कुछ नहीं दिख रहा होता था। पर कुछ देर बाद वास्तव में ही कोई न कोई मोटर आदि वहाँ से गुजरती थी। वस्तुतः बात यह थी कि वे ऐसे वाहनों की आगमन ध्वनि अन्य लोगों के सुनने से पहले ही सुन लेते थे।

इच्छा—मौज

निराला जी बड़ा ही दयावान प्रकृति के व्यक्ति थे। उनके पास जो कुछ भी होता था उससे दूसरों को प्रसन्न करने में, सन्तुष्ट करने में उन्हें आनन्द सा आता था। इस विषय में चौधरी साहब ने एक बड़ा सुन्दर संस्मरण सुनाया। एक बार ऐसा हुआ कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन में भाग लेने के लिए चौधरी साहब प्रयाग जा रहे थे। सुमित्रा जी भी उन दिनों उन्नाव में न थीं। घर पर केवल बालिका विन्नी बची जा रही थी। अतः जाते समय चौधरी साहब एक दस रुपये का नोट निराला जी को इस आशय से देने गये कि शायद कोई जरूरत

लगे तो वक्त पर काम आयेगा। निराला जी पहले तो उसे लेने से बिल्कुल इन्कार ही कर दिया पर बहुत आग्रह करने पर उसे लेकर तकिये के नीचे रख लिया। चौधरी साहब लौटे तो देखा कि निराला जी कुछ अन्य लोगों के साथ कुल्फी खा रहे हैं। कुल्फी खा चुकने पर नौ आने पैसे तकिये के नीचे से निकाल कर उन्होंने चौधरी साहब के हाथ पर रखे और उसमें ग्यारह आने पैसे और मिलाकर कुल्फी वाले को भुगतान करने को कहा। भुगतान हो गया। चौधरी साहब समझे कि नोट खर्च हो गया होगा पर बाद में दरियाफ्त करने पर ज्ञात हुआ कि रोज सायंकाल निराला जी बच्चों को इकट्ठा करते थे और उनके साथ खेलते थे तथा उनसे पूछते थे कि उनकी क्या खाने कि इच्छा है। फिर बच्चों को उनकी इच्छानुसार उनकी प्रिय चीज उन्हें खिलाते थे। इसे वे इच्छा-मौज कहते थे। वह दस का नोट इसी में खर्च हुआ था।

पढ़े लिखे गधे

एक बार काफी रात्रि में लखनऊ के एक नवयुवक उन्नाव पहुँचे। संयोगवश उस दिन घर पर केवल निराला जी ही थे। चूल्हे आदि का समय समाप्त हो चुका था। अतः उनका आदर-सत्कार का प्रबन्ध करने के लिये वे बाजार चले क्योंकि किसी अतिथि को भूखा प्यासा न सोने देते थे। चलते समय उन्हों ने पूछा कि भाई कितनी पूड़ियाँ खाओगे ? पाव भर ? आधा सेर ? या तीन पाव ? पर वे हर बार चुप रहे। लखनऊवा तकल्लुफ में कुछ भी न बोले। निराला जी बाजार गये और सेरभर पूड़ियाँ तौला लाये। पर उन सज्जन से उनमें आधी भी न खायी गयी और बाकी बची पूड़ियाँ को उन्होंने ढंक कर रख दिया और सो गये। सुबह निराला जी ने वे पूड़ियाँ देखी तो उनसे पूछा कि पूड़ियाँ क्यों नहीं खाई ? क्या वे अच्छी नहीं थीं। तब उन्होंने बताया कि पूड़ियाँ अच्छी तो थी किन्तु इतनी ज्यादा थीं कि वे सब न खा पाये इसलिए बच गयीं। निराला जी ने उनसे कहा कि मैंने तो तुमसे पूछा था कि कितनी पूड़ियाँ खाओगे, पाव भर ? आधा सेर ? या तीन पाव ? पर तुम कुछ बोले नहीं, मैं समझा और ज्यादा खाते होगे इसलिए पूरे सेर भर पूड़ियाँ ले आया। उनके इस बेमाने तकल्लुफ पर निराला जी ने उन्हें पढ़ा लिखा गधा ठहराया।

जबलपुर के छात्र

एक बार जबलपुर के कुछ छात्र निराला जी से मिलने आये और उनसे किसी समारोह में जबलपुर आने के लिए निमन्त्रित किया। निराला जी ने कहा कि वे पन्द्रह सौ रुपये लेंगे तब आवेंगे। उन लोगों ने देने की हामी भरी। तब उन्होंने पूछा कि जिलाधीश आदि कोई सरकारी अधिकारी तो तुम्हारी संस्था का प्रधान

तो नहीं है? उनके 'न' कहने पर उन्होंने आने की पूरी स्वीकृति दी। फिर उनसे पूछा तुम लोग क्या करते हो? उन लोगों ने बताया कि विद्यार्थी हैं। निराला जी बिगड़ गये। बोले तुमने पहले क्यों नहीं बताया कि विद्यार्थी है। तुम इतना रुपया कहाँ से दोगे? नहीं नहीं मैं तुमसे रुपये रुपये न लूंगा। ऐसे ही आऊंगा। अन्त में बहुत आग्रह करने पर किराये के अतिरिक्त ५० रु० वे लेने को तैयार हुए।

उन्हें सरकारी अधिकारियों और ऐसे आयोजनों से बड़ा चिढ़ थी जिसमें उनका हस्तक्षेप हो और उसमें शासन के अधिकार की बू आती हो। इस सम्बन्ध में अपना आक्रोस प्रकट करने में वे कोई दुराव छिपाव नहीं करते थे और अपने मन में आयी बात को दो टूक शब्दों में कह डालते थे। चाहे किसी को बुरी लगे या भली।

कानपुर की कुछ महिलाओं के द्वारा उत्तर प्रदेश की तत्कालीन गवर्नर श्रीमती सरोजनी नायडू को मानपत्र देने के प्रसंग से सुमित्रा जी को निमंत्रण देने आयी महिलाओं से वे खूब बिगड़े थे और कहा था कि गवर्नर को मानपत्र दिया जायगा और उसमें सुमित्रा जायगी। नहीं, हरगिज नहीं। तुम सब भाग जाओ। इस घटना से वे इतने रुष्ट हुए थे कि कमरे में बिछी कालीन वगैरह सब बाहर फेंकवा दिया था और अपना कुछ टाट वगैरह बिछा लिया था। अन्त में कई दिनों बाद श्रीमती महादेवी बर्मा जी ने उन्हें समझा बुझा कर शान्त किया था।

आत्म प्रतिष्ठा

निराला जी वैसे तो अकिंचन से अकिंचन को भी गले लगाने को तैयार रहते थे। पर यदि उन्हें यह आभास हो जाता था कि कोई अपने धन या अन्य किसी घमण्ड में उनकी उपेक्षा कर रहा है तो वे उससे बात भी नहीं करते थे। बनारस में उनकी जयन्ति के अवसर पर कलकत्ते के एक साहित्यिक रुचि के कुबेरपति जो उनके प्रशंसक भी थे उनसे मिले और उनसे कलकत्ते आने का अनुरोध किया। निराला जी ने कहा कि कोई उपयुक्त अवसर आने पर आऊँगा। उन सज्जन ने कहा कि शीघ्र ही मेरी कन्या का विवाह होने वाला है आप उसमें पधारें। निराला जी ने उन्हें अपना पता नोट कराया और कहा कि जब विवाह हो तब आप सूचित कीजियेगा, मैं अवश्य आऊँगा। किन्तु जब विवाह का अवसर आया तो उस सज्जन ने निराला जी को सीधे कोई सूचना न भेज कर अन्य साहित्यकार महोदय से कह दिया कि आते समय वे साथ में निराला जी को भी लेते आवें। निराला जी इस बात से खफा हो गये और फिर बहुत अनुनय, विनय, प्रलोभन पर भी वे वहां न गये।

स्मार्त्त निराला

इन संस्मरणों के अलावा चौधरी साहब ने उनके कुछ गुणों की भी चर्चा विशेष रुप से की। प्रथम तो यह कि वे अपनी पाण्डुलिपियाँ आदि लिखते समय बड़ी सावधानी बरतते थे। उसमें एकाध काट पाट हो जाने पर भी वे पूरा पृष्ट नये सिरे से लिखते थे।

उनके 'पीने पिलाने' की आदत की भी चर्चा आया तो चौधरी साहब ने इस विषय में कहा कि इस विषय में उन्हें व्यर्थ ही बदनाम किया गया है। दो ढाई साल के दौरान में जब तक वे युग मन्दिर उन्नाव में रहे केवल दो बार हो ऐसा अवसर आया। वह भी इंस परिस्थि में कि किन्हीं आगण्तुकों या मित्रों ने विशेष रुप से सुरा द्वारा ही अपना आतिथ्य कराना चाहा था और निराला जी अतिथि प्रेमी प्रथम श्रेणी के थे ही। अतः उन्होंने उन लोगों के लिए इसका प्रवन्ध कर दिया। स्वयं जब एक बार उनसे चौधरी साहब ने ऐसा प्रस्ताव किया था तो उन्होंने अस्विकार करते हुए कहा था-अरे। चौधरी। हम साईटिका के मरीज मान हम भला दारु पियब ?

———

निराला साहित्य में नारी

प्रो०--राधेश्याम उपाध्याय (प्रयाग)
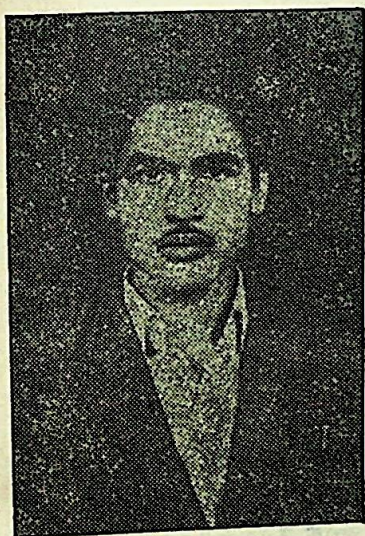
रीति कालीन हिन्दी साहित्य में नारी का जो चित्रण हुआ, वह प्रायः मर्यादा की सीमाओं के बाहर ही किया गया। बिहारी, घनानन्द, पद्‌माकर, यतिराम आदि रसिक कवियों ने नारी के मांसल सौन्दर्य, प्रेम-व्यापार और संयोग-वियोग आदि का अतिशयोक्ति पूर्ण चित्रण किया है, जिसमें अश्लीलता की गन्ध आती है। सच तो यह है कि उस समय नारी को एक योग्य सामग्री या मदिरा से अधिक समझा ही नहीं गया। 'प्रेयसी' के अतिरिक्त किसी नारी का 'माँ' 'बहन' 'बेटी' या कोई और भी रूप हो सकता है, इसको रीति कालिन कवियों ने जैसे कल्पना ही नहीं की। उक्त तथ्य की अभिव्यक्ति के लिए श्रीमती महादेवी वर्मा के शब्दों में हम कह सकते हैं—

"नारी केवल मांसपिण्ड की संज्ञा नही है। आदिम काल से आज तक विकास पथ पर पुरुष का साथ देकर उसकी यात्रा को सरल बनाकर, उसके अभिशापों को स्वयं झेलकर और वरदानों से जीवन में अक्षय शक्ति भरकर, मानवी ने जिस व्यक्तित्व, चेतना और हृदय का विकास दिया है, उसी का प्रर्याय नारी है। किसी भी जाति ने उसके विविध रूपों और शक्तियों की अवमानना नहीं की, परन्तु किसी भी जाति ने, अपनी मृत्यु की व्यथा कम करने के लिए उसे मदिरा से अधिक महत्व नहीं दिया।"

द्विवेदी युग में नारी का 'प्रेयसो' से हटकर कुछ मानवीय मूल्य आँका गया और छायावाद युग के पदार्पण के साथ ही वह माँ; सहचरी और देवी रूप में प्रतिष्ठित हो गई। महाप्राण निराला ने तत्कालीन नारी कि दीन दशा देखी और उसे गौरवपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित किया। छायावादी कवियों में प्रकृति के प्रति जो भाव थे, वे अधिकांशतः नारी के प्रति ही घटित हुए, क्योंकि छायावादी कबि प्रकृति

का मानवीकरण कर उसे नारी रूप में देख रहा था। अतः छायावाद युग में भी प्रकारान्तर से नारी का 'प्रेयसी' रूप वर्त्तमान ही रहा, माँ सहचरी और देवी रूप में तो उसकी प्रतिष्ठापना केवल निराला जी ने ही की।

निराला जी के कृतित्व में उनका अपना व्यक्तित्व ही स्वभावतः जा समाया है, अतः जीवन के विभिन्न उतार चढ़ावों के अनुरूप ही उनकी नारी-विषयक भावना विभिन्न रूपों में चित्रित हुई है। जीवन के यौवन काल में उन्होंने 'जूही की कली लिखी। इसके कुछ समय बाद 'सरोज-स्मृति लिखी 'विधवा-विवाह लिखा और वह तोड़ती पत्थर' लिखा। इन कविताओं में ही नारी के विभिन्न रूपों का चित्रण हुआ है। 'तुलसी दास' खण्डकाव्य में चित्रित रत्नावली का चरित्र निराला जी की नारी-विषयक कल्पना की सात्विकता की चरम सीमा है। सुविधा की दृष्टि से कुछ उदाहरणों सहित उनकी नारी-विषयक भावना पर विचार करना श्रेयस्कर होगा।

"जूही की कली" निराला जी की प्रारम्भिक कविताओं में से है, जिसमें प्राकृतिक-व्यापारों' के माध्यम से व्याज-रूप से नारी-सौन्दर्य का वर्णन किया गया है। देखिए—

विजन वन वल्लरी पर, सोती थी सुहाग भरी,
स्नेह स्वप्न मग्न, अमल कोमल तन तरुणी,
जूही की कली, दृगबन्द किए शिथिल पत्रांक में।
वासन्ती निशा थी;
विरह विधुर प्रिया संग छोड़—
किसी दूर देश में था पवन, जिसे कहते है मलयानिल।
आई याद बिछुड़न की मिलन की वह मधु बात
आई याद चाँदनी की मिलन की वह मधुर रात
आई याद कान्ता की कम्पित कमनीय गात।।

❀ ❀ ❀ ❀

निर्दय उस नायक ने निपट निठुराई की
कि झोंको की झाड़ियों से
सुन्दर सुकुमार देह
मारी झकझोर डाली,
मसल दिए गोरे कपोल गोल,
चौंक पड़ी युवती

निःसन्देह उक्त कविता में कवि ने उन्मुक्त प्रेम-व्यापार का वर्णन किया है और खुलकर किया है। लेकिन यह वर्णन कवि ने मर्यादा की सीमा के अन्दर ही किया हैं। उसका चित्रण न तो अश्लील है, न वीभत्स। उसने केवल स्वाभाविकता की रक्षा करते हुए अपनी मुक्तक वृत्तावली में अद्भुत सौन्दर्य-सृष्टि की है और शैलीगत विशेषता के कारण उसकी कविता इतनी प्राणवान और हृदय स्पर्शिती बन गई है।

निराला जी शृंगार वर्णन में इतने पटु हैं, कि वे कहने को तो सब कह जाते पर असंयमित नहीं होते। उनका यथार्थ आदर्श और मर्यादा की सीमा नहीं लांघ सकता। अब रुपक के माध्यम से किए गये वर्णन में एक ऐसी नारी का सौन्दर्य देखिए, जो रात भर अपने प्रियतम के साथ रति और स्नेह का रंग बनाकर होली खेलती रही है :—

"नयनो के डोरे लाल गुलाल-भरे, खेली होली।
जागी रात सेज पति संग रति स्नेह रंग घोली।
दीपित प्रकाश. कंज छवि मंजु मंजु हंस खोली—
मली मुख-चुम्बन रोली।
प्रिय-कर-कठिन उरोज-परस कसक-मसक गई चोली,
एक बसन रह गई मन्द हंस अधर दशन अनबोली—
कली सी कांटे की तोली।
मधु-ऋतु-रात, मधु अधरों की पी मधुवी सुध-बुध खो ली,
खुले अलक, मुंद गए पलक दल, श्रम सुख की हद हो ली।
बनी रति की छवि भोली।
बीती रात सुखद बातो में प्रात पवन प्रिय डोली,
उठी सम्हाल बाल मुख लट, पट दीप बुझा हँस बोली—
रही यह एक ठिठोली।"

उक्त कविता में कवि ने 'खुले अलक मुंद गये पलक दल' कहकर बड़ी सूक्ष्मता से देह-सुख के समय की चेष्टाओं एवं नायिका की बेसुधी का वर्णन किया है। 'कंज छवि मंजु मंजु हँस खोली' कहकर कवि ने नायिका की मधुर बोली का चित्रण किया है, जिसे बोलते समय उसका कमल मुख और भी खिल जाता है। यह सारा वर्णन कितना शृंगारिक और कितना सूक्ष्म है, किन्तु कितना मर्यादित।

और अब सोकर उठी उस नायिका का चित्र देखिए, जो रात भर प्रिय संग जगी है और जिसकी नींद अब भी सोने का आग्रह कर रही है। सौन्दर्य के वर्णन में

निराला की लेखनी ने संकोच बिल्कुल नहीं किया किन्तु सदैव रक्षा की है।

"(प्रिय) यामिनी जागी।
अलस पंकज दृग अरुण मुख
तरुण अनुरागी।
खुले केश अशेष शोभा भर रहे
पृष्ठ ग्रीवा-बाहु-उर पर तर रहे
बादलों में घिर अपर दिनकर रहे
ज्योति की तन्वी तड़ित—
द्युति से क्षमा माँगी।
हेर उर पर फेर मुख के बाल
लख चतुर्दिक चली मन्द मराल,
गेह में प्रिय स्नेह की जयमाल,
वासना की मुक्ति मुक्ता—
त्याग ने त्यागी।

एक अन्य कविता की ओर ध्यान दीजिए जिसमें परकीया प्रेम का वर्णन हुआ है। प्रियतमा प्रियतम को सम्बोधित करती हुई सारी विवशताओं और व्यथाओं (समाज के भय से होने वाली) का वर्णन करते हुए निवेदन करती है कि हे प्रियतम! कुछ ऐसी स्थिति उत्पन्न करो, जिससे हमारा सम्मिलन समाज द्वारा अनुचित न करार दिया जाय और हम बिना किसी डर के इच्छानुसार मिल सकें।

'हुआ प्रात, प्रियतम, तुम जावगे चले?
कैसी थी रात, बन्धु, थे गले-गले।
फूटा आलोक,
परिचय परिचय पर जग गया भेद, शोक!
छलते सब चले एक अन्य के छले!
जावेगे चले?
बाँधो यह ज्ञान,
पार करे बन्धु, विश्व का व्यवधान!
तिमिर में मुंदे जग, आओ भले चलें!

ये थी निराला द्वारा लिखित नारी-सौन्दर्य-परक कविताओं की एक मनोरम झांकी, जिसमें नारी-सौन्दर्य का, प्रेम व्यापार का संकोच रहित किन्तु मर्यादित वर्णन हुआ है। इन कविताओं से भी पता लगता है कि युवावस्था के प्रारम्भ में निराला

की प्रेम-भावना अत्यन्त प्रबल रही होगी।

अबतक निराला जी ने भी नारी का चित्रण 'प्रेयसी' रूप में ही किया था, किन्तु आगे चल कर उनकी विचार-धारा बदल गई। सन् १९१८ में पत्नी (मनोहरा देवी) की मृत्यु के कारण उनके लौकिक प्रेम का आधार जाता रहा, यही कारण है कि उनकी आगे की कविताओं में उद्दाम यौवन का वह वेग नहीं पाया जाता, जो कि "तुम और मैं" और "जूही की कली" में है। निराला जी की सांसारिक सुख की वासना मनोहरा देवी की चिता में उनके साथ ही जलकर भस्म हो गई और वे वीतराग हो गये। कामिनी कंचन के प्रति फिर उनके मन में कोई भाव ही नहीं जगा उन्होंने मित्रों के दवाव डालने पर और एक सम्पन्न वंगीय परिवार से प्रस्ताव आने पर भी दूसरा विवाह नही किया। अब भला भारतीय संस्कृति के उपासक 'निराला' किसी नारी को प्रेयसी रूप में कैसे देखते, उसका ऐसा चित्रण कैसे करते? फलतः उन्होंने नारी के अन्य रूपों को लेखनी का विषय वनाया। प्रिय पुत्री 'सरोज' की मृत्यु से निराला जी को मर्मान्तिक पीड़ा हुई।

आज तक शायद ही किसी कवि ने अपनी पुत्री के सौन्दर्य का वर्णन किया हो, किन्तु महाप्राण ने इसे बड़ी कुशलता से किया। शोकगति 'सरोज-स्मृति' में वे मर्यादा और गरिमा की रक्षा करते हुए अपनी पुत्री के सौन्दय का वर्णन करते हैं। उन्हें वह क्षण याद आ रहा है—विवाह के शुभकलश का मंगलमय पवित्र जल पड़ता है और सरोज बिल्कुल बदली सी लगने लगती है।

"तू खुली एक उच्छ्वास संग,
विश्वास स्तब्धवँध अंग अंग,
नत नयनो से आलोक उतर
काँपा अधरों पर थर थर थर।"

कवि इससे भी आगे बढ़कर अनुभव करता है:—

"श्रृंगार रहा जो निराकार,
इस कविता में उच्छ्वसित धार,
गाया-स्वर्गीय प्रिया-संग,
भरता प्राणों में राग रंग
रति रूप प्राप्त कर रहा वहीं,
आकाश बदल कर बना मही।"

निस्सन्देह हम डाक्टर नामवर सिंह के शब्दों में कह सकते हैं, "कुल मिलाकर

छायावाद में नारी के प्रेयसी रूप की ही प्रधानता दिखाई पड़ती है, माँ, वहिन और कन्या के रूप दवे ही रह गये।'...... 'सरोज स्मृति' में प्रेम जिस वात्सल भाव की व्यंजना हुई है वह छायावाद में ही नहीं, वल्कि सम्पूर्ण काव्य के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान का अधिकारी है।"

जीवन में जब कवि को ठोकर लगी तो उसने देखा कि संसार में उसी की भांति वहुत से लोग दुखी हैं। पत्नी मृत्यु के पश्चात आदमी का जीवन उतना कठिन नही होता, जितना पति की मृत्यु के पश्चात् विधवा नारी का होता है। एक विधवा के प्रति निराला जी के हृदयोद्गार कितने मार्मिक हैं :—

"वह इष्ट देव के मन्दिर की पूजा सी,
वह क्रुर काल ताण्डव की स्मृति रेखा
वह दीप-शिखा सी शान्त, भाव में लीन,
वह टूटे तरु की छुटी लता सी दीन
दलित भारत ही की विधवा है।"

विधवा नारी का यह चित्र मानव मात्र के हृदय को सहानुभूति और वेदना सी भर देता है।

आगे चलकर कवि और भी कठोर मानव धर्म का पालन करता है। उसकी दृष्टि ऊँचे-ऊँचे महलों की खिड़कियों से हटकर इलाहावाद के फुटपाथ पर पत्थर तोड़ती हुई, पसीने की बूँदे वहाती हुई उस असहाय नारी के ऊपर जा पड़ती है—

वह तोड़ती पत्थर
देखा उसे मैंने इलाहावाद के पथ पर

× × ×

एक छन के बाद वह कांपी सुधर
ढुलक माथे से गिरे सीकर
लीन होते कर्म में फिर यो कहा—
'मैं तोड़तीपत्थर'।"

सम्भवतः छायावादी कवियों में निराला जी ही एक ऐसे कवि हैं, जो प्रगतिवाद की ओर वढ़े और जिसने सर्वहारा वर्ग की प्रतिनिधि उस मजदूरिन की विवशताओं को अनुभव किया। यही प्रगतिवादी विचार धारा का श्री गणेश है।

निराला जी द्वारा लिखित खण्ड काव्य "तुलसीदास" में नारी को सबसे ऊँचा पद प्राप्त हुआ है। इस काव्य में रत्नावली की चरित्र सबसे आदर्श चरित्र बन कर

चोंच, जैसे जयन्त की, नहीं जैसे कोई चाह
देखने की मुझे और
कैसे भरे दिव्य स्तन, हैं ये कितने कठोर
मेरा मन काँप उठा, याद आई जानकी
कहा तुम राम की,
कैसे दिए दर्शन, "

कवि कितनी सूक्ष्मता और तल्लीनता से नारी-तन का अवलोकन करता है पर न केवल संयम नही खोता, बल्कि भक्ति-भाव को भी जन्म देता है। कदाचित् मैं, तो यही कहूँगा कि संयमित सौन्दर्यांकन की यह चरमसीमा है।

संक्षेप रूप में हम यह कह सकते हैं कि महाकवि निराला ने नारी सौन्दर्य का वर्णन बड़ी सूक्ष्मता से किया है, तो भी भारतीय आदर्श, मर्यादा और संयम की पूरी-पूरी रक्षा की है तथा नारी को केवल 'प्रेयसी' के रूप में ही नहीं देखा, प्रत्युत उसे 'मां,' बहिन बेटी और आराध्य देवी के पद पर प्रतिष्ठित करने का सफल प्रयास किया है।

यदि किसी परिस्थिति में स्मृतियां भी मौन हो······ तो हम क्या करें ? तब हम सज्जनों के सदाचरण का अनुशरण करें। साधु परुषों की पहचान यह हैं कि उनके हृदय में बुरे विचार नहीं रहते··· ········। यदि साधु पुरुषों का आचरण भी देखने का अवसर न मिले तब क्या करें ? तब हम अपने शुद्ध अन्तः करण के आदेशों का पालन करें। सन्देह की स्थिति में सज्जन अन्तः करण की आवाज पर ही भरोसा करते हैं। किन्तु अन्तः करण की आवाज का सहारा अन्त में ही लेना चाहिए।

—जगतगुरु श्री चन्द्रशेखरेन्द्र सरस्वती शंकराचार्य

दार्शनिक निराला

—(विद्यालंकार जगन्नाथ मिश्र गौड़ 'कमल')

कवि दार्शनिक होता है । यदि ऐसा कोई कहता है तो मैं उसकी उक्ति में इस प्रकार परिवर्त्तन करना चाहता हूँ । "कवि को दार्शनिक होना चाहिए ।"

मैं समझता हूँ इस विचार की मान्यता विवादास्पद नहीं है । इस विचार का स्फुरन मुझे उस महाकवि महाप्राण से मिली जिसके सम्बन्ध में मैं कुछ पंक्तियाँ लिख रहा हूँ ।

वर्ष १९३२ अर्थात् आजसे ३९ वर्ष पूर्व की बात है । मेरी कविताओं का संग्रह छप रहा था । नाम रखा गया था 'कलरव' । मैंने 'निराला' जी से सम्मति माँगी । मैंने लिखा "आपकी कविताओं की दार्शनिकता का मैं कायल हूँ । मेरी कविताओं का एक संग्रह छप रहा है आपकी सम्मति वांछनीय है । प्रूफ के छपे पृष्ट भेज रहा हूँ ।"

निरालाजी ने सम्मति भेजी । नितान्त संक्षिप्त किन्तु अर्थ-गर्भित । उन्होंने उत्तर में कहा "वास्तविक कविताओं की पृष्टभूमि दर्शन हीं है । कविताओं के गूढ़ अर्थ दर्शन की विचारधारा से धुले होते हैं । कवि का दार्शनिक होना उसके मौन-साधक बनने का संकेत है ।" मैं इन बातों को स्मृति के आधार पर लिख रहा हूँ क्योंकि एक युग बीतने के बाद इन्हें लिखने का अवसर आया है ।

महाप्राण 'निराला' के इस कथन को स्मृति की ओर रखकर जब उनके जीवन के घटना-क्रम को ओर में देखता हूँ तो ऐसा लगता है कि कवि की महानता का कोई विलक्षण रूप उनके सामने रहता था और उस रूप के साँचे में वे अपने को ढालना चाहते थे ।

कई बार मेरा उनसे सम्पर्क हुआ । उनकी रचनाएँ गद्य या पद्य प्रमाणित करती थी कि वे अगाध की अपरिमेय छाया में प्रवेश करते जा रहे हैं उनकी उक्ति—

समुद्यत मन सदा हो स्थिर
पार कर जीवन निरन्तर
रहे बहती भक्ति वरुणा ।

उनकी मौन साधना बनकर मगध की ओर जाने की कामना को सम्पुष्ट करती है ।

[illegible] निराला

वर्ष १९२०-२१ से ही मुझ में मेरा कवि जागृत हुआ । युग छायावाद का था। विहार में इने-गिने कवि कविता-क्षेत्र में थे जिनमें से अनेक अतीत के गर्भ में समा गए हैं। तब से बराबर मेरी आकृष्टि महाकवि 'निराला' की रचनाओं की ओर रही। कलकत्ता से प्रकाशित साप्ताहिक 'मतवाला' में उनकी अनेक कविताएँ छपी। इस पत्र में मैं भी उनकी प्रेरणा से लिखता था। उनकी कविता बादल-राग कई अंकों में निकली। यदि निराला जी इस कविता के अतिरिक्त दूसरी कविता न भी लिखते तो उनकी अमरता ख्याति के शिखर पर चढ़कर बोलती। ऐसी एक कविता लिखकर कोई भी कवि अमर हो सकता है।

जिस प्रकार से बाह्य भौतिक पदार्थों को लोग संवेदनाओं के आधार पर जानते हैं, उसी प्रकार से आत्म-चिन्तन के द्वारा मन के विषय में ज्ञान प्राप्त किया जाता है। आत्म-चिन्तन के आधार पर वस्तु-सवेदन, स्मरण-प्रक्रिया, विचारना, संकल्प आदि मन के गुण माने जाते हैं। 'निराला' जी आत्म-चिन्तक थे इसमें सन्देह नहीं। कविता उनके मन का विषय थी। दर्शन मन की भावनाओं को गूढ़ व्याख्या की भाषा प्रदान करता है।

'निराला' जी आत्मचिन्तक थे। अपने को परखने की कला उन्होंने पायी थी। अपने को परखने वाला इस शक्ति को देखने लगता है, जिसका अंश बनकर वह धरातल पर आया है। विश्व की विषमताओं से वह ऊबता नहीं है और मौन साधक बन जाता है। इसे लोग पागल समझने लगते हैं। 'निराला' जी की यही स्थिति हो गयी थी।

स्मरण-प्रक्रिया उनकी संतुलित और सुगठित थी। बिहार के किसी साहित्यिक से जब भी उनकी भेंट हुई, उन्होंने उत्सुकता के साथ पूछा कमल जी अब हैं या नहीं उन्हें मैं बहुत दिनों से जानता हूँ।"जानकी वल्लभ शास्त्री जी ने जब 'निराला' पर एक स्मृति-ग्रन्थ निकालने की योजना बनायी और उन से मिले तो उन्होंने कहा कि इस ग्रन्थ में 'कमल' जी से भी कुछ लिखवाना चाहिए। ऐसा शास्त्री जी ने मुज्जफरपुर में मुझसे कहा था।

भाव, भाषा एवं छन्द इन सभी विषयों में निराला जी ने अपनी क्रांतिकारी भावनाओं का परिचय दिया था। दार्शनिकता की सार्वभौम सत्ता तथा कम से कम शब्दों में भावों को भरने की क्षमता उनकी कविताओं की विशेषता रही है। संस्कृत-निष्ट खड़ी बोली उनकी भाषा का उत्कृष्ट रूप रही है।

कविताओं में अन्तर्हित आत्म-चरित मार्मिकता, सभी भावुक जनों के मर्मस्थल

को स्वभावतः स्पर्श करने में सशक्त होती हैं।

भावों की अभिव्यंजना। रूढ़िवाद की सीमा से बाहर निकलकर अनुभूति के स्वतन्त्र क्षेत्र में आने की प्रवृति के मार्ग में निराला जी की कविता चपल गति से चली है और दूर-सुदूर पहुँचने में सफल हुई है।

निराला जी अपने अन्त क्षणों में एक साधारण कवि या महाकवि नहीं रह गये थे। वे सिर्फ आत्म चिन्तक कविर्मनीषी एवं दार्शनिक काव्य-तत्ववेत्ता बन गये थे।

निराला जी ने काव्य-चित्रों में बहुदर्शित दृश्यों को अपनी भावतूलिका से रंगा। उन्होंने जिस प्रकार अपनी कविता "तुम और मैं" रहस्यमय नाद वेद आकार सार' को गूंजित किया, जूही की कली और शेफालिका में प्रणय की चंचल गति अनुप्रेरणाओं के पुष्पित बाग उगाये उसी प्रकार जागरण-वीणा बजायी करुणा से उद्वेलित हो विधवा की विधुर पीड़ा के प्रति भावाश्रु बहाया और पत्थर तोड़ती किसी गरीब स्त्री के ललाट पर बिखरे हुए श्रम-सीकर पहचांन को अपने मार्मिक शब्दों द्वारा प्रकट किया।

ये हैं महाकवि निराला की उपलब्धियों के सक्षिप्त वृत। मैं उनके स्नेह का पात्र था और वे सबके लिए थे क्रांतिकारी, युगप्रवंतक आत्म प्रतिम साहित्य मन्दिर के निष्ठावान पुजारी।

———

एकबार हिन्दी के स्वनामधन्य आलोचक आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, श्री शिवपूजन सहाय से मिलने पटना आये। प्रसिद्ध साहित्यकार श्री शिवपूजन सहाय ने कहा—"आप आ गये।"

इस पर हँसते हुए आचार्य जी ने कहा—'पटना आये और शिवजी से न मिलें।

हँसते हुए पुनः आचार्य शिवपूजन सहाय ने कहा—'सब विश्वनाथ की कृपा है।

—नरेश शर्मा 'गुलशन'

निराला की खोज में

व्ही० एस० एन मूर्ती

स्मृति-दिवस, गोष्ठियाँ, जयंतियाँ आज भी मनायी जाती हैं, आयोजित की जाती हैं, बहुत ही औपचारिक और चापलूस रीति से ! बहुत दिनों से इच्छा थी. एक बार इन सभा-समितियों में जाऊँ। कदाचित् उस महापुरुष के दर्शन हो जाएँ, जिनकी जयंती मनायी जा रही है। 'प्रेमचन्द जयंती' आयोजित की गई थी, मुझे भी बुलाया गया। इच्छा बलवती थी, चल पड़ा। आप इसे सनक ही कह सकते हैं कि मैं इस जयंती में प्रेमचन्द स्वरूप खोजने गया था। खादी के कपड़ों में सजे धजे, अपने साहित्यक मित्रों की प्रतीक्षा करते हुए तथा कथित साहित्यकारों ने प्रेमचंद की आड़ में अपने क्रियाकलापों का वर्णन किया, अपनी ही प्रशंसा की। फिर चाय-वाय आदि . ... । अब कभी 'निराला जयंती' के लिए बुलाया जाता है अथवा सुनता हूँ, तो मेरे पाँव स्वयं पीछे खिच जाते हैं। भला इन सभा-गोष्ठी और जयंतियों में प्रेमचन्द, राहुल और निराला कहाँ मिलेंगे ! यदि इन औपचारिकताओं में ही निराला के दर्शन हो जाते, तो कदचित् निराला को अपने जीवन में इतना संघर्ष नहीं करना पड़ता। उसके बाद से मुझे ऐसा लगने लगा है कि निराला शाश्वत है, यदि उसका स्वरूप खोजना चाहते हो तो ऐसे वर्ग में ढूँढो, जहाँ से 'निराला' बाहर आया है। और मैं खोज रहा हूँ .... ।

कई ऐसे बालक है, जिन्होंने मातृ-वात्सल्य का रस नहीं चखा, विमाता के दुःख-कष्टों को सहने वाले आज भी कई हैं। इस असीम सुख से वंचित् होकर भी वे अपने शरीर का होमकर सरस्वती की साधना कर रहे हैं। 'निराला' ने माता के विछोह और विमाता द्वारा दिए गए कष्टों के कारण भिखारिन और कुबड़ी पान वाली में ही साक्षात् मातृ-रूप के दर्शन किये। परन्तु वह बालक क्या करे ? वे निराले क्या करे ? माता की ममता को पाने के लिए पृथ्वी माता से प्रेम करें अथवा उसी वर्ग की पीड़ित ममतामयी माताओं का स्नेह पाएँ।

लड़कियाँ सड़क पर चली जा रहीं हैं, सीधी-सादी हो या फैशनेबुल ! भूखी आँखें उन्हें घूर रही हैं, कौन जाने कब उनका चरित्र-भंग हो जाए। विवशता में आज कई निम्न-मध्यवर्गीय परिवार की युवतियाँ पुंजी-पतियों की रखैलें बनी हुई है, कुछ उससे भी बदतर स्थिति में हैं। संघर्ष कितना करें, कब तक करें ? 'निराला' ने इस नारी को अपनी सामाजिक रूढ़ियों, चरित्र-हन्ताओं के प्रति विद्रोह करने का

एक पथ प्रदर्शित किया था। 'निराला' ने अपने कुछ उपन्यासों में निर्बल नारी का जो सबल रूप दिखलाया, विद्रोह की एक नयी रूप-रेखा दी, वह आज कल के दिनों में पिसती हुई नारियों का मार्ग दर्शन कर सकती है। इस विषमता से लोहा लेने के लिए प्रेरित कर सकती है।

आये दिन लड़के-लड़कियाँ अपने माता पिता को आँखें दिखाती हैं, सड़कों पर उतर आती हैं (सड़क के किनारे ही उनका झोपड़ीनुमा मकान है जो)। यद्यपि, कोई भी नहीं कह सकता कि ये लड़के-लड़कियाँ अपने माता-पिता से स्नेह नहीं रखतीं, उनकी श्रद्धा नहीं करती। परन्तु, फिरभी कोसने से बाज नहीं आते। माता-पिता के पिछड़ेपन के प्रति विद्रोह, आगे-पढ़ने के लिए धनाभाव के प्रति विद्रोह, माता-पिता के अकर्मण्यता के प्रति विद्रोह, इन सब में फँसा मस्तिष्क विद्रोह की सही दिशा नहीं पाता है। शृंखलाहीन और ढुलमुल आधार पर खड़े रहने के कारण विद्रोह, कुत्सित रूप में प्रकट होता है। 'निराला' ने इस विद्रोह को अपने अन्दर समा लेने का प्रयत्न किया। 'निराला' ने जीवन भर कष्ट और अपमान सहे और अनन्त विद्रोह कर उठे। यह एक नयी दिशा है, शोषित वर्ग के युवक-युवतियों के लिए।

इस बीच सुना था, किसी पँजाबी ग्रेजुएट लड़की ने किसी दक्षिण भारतीय युवक से शादी कर ली। मुहल्ले भर के पंजाबियों में सरगर्मी रही, सिक्ख धर्म की दुहाइयाँ दी गई, कुछेक भली-बुरी पर उतर आए, कुछ दिनों तक तनाव रहा। मुहल्ले के युवक-युवतियों में उत्साह जगा, चलो एक जोड़े ने तो बँधनों को तोड़ फेंका। उन दोनों ने विद्रोह किया, सामाजिक व्यवस्था के प्रति। एक नया समाज बसाने की ओर कदम बढ़ाया! जातिधर्म, वर्ण और सम्प्रदाय के बंधन तोड़ डाले। 'निराला' का विद्रोह दृष्टिगत हो उठा। निराला ने बहुत पहले ही इस रूप-रेखा को बनाया था, आवश्यकता थी इसे आलिङ्गन में बाँधने की। बाँध रहे हैं, बाँधेंगे, बन रहे हैं और बनेंगे! वाह निराला! प्रेम की सच्ची कसौटी दर्शायी तुमने। कोई और इस विद्रोह का साथ दे या न दे, मुझे भिन्न-मध्यवर्गीय परिवार अर्थात् तुम्हारे परिवार वालों का सामाजिक विद्रोह सुखदायक लग रहा है। ठीक ही कहा था तुमने :—

'दोनों हम भिन्न वर्ग,
भिन्न-जाति, भिन्न रूप,
भिन्न धर्म-भाव, पर
केवल अपनाव से, प्राणों से एक थे।
किन्तु दिन रात का
जल और पृथ्वी का

भिन्न सौन्दर्य संवंध स्वर्गीय है।"

आज युवक इस संशय में हैं, कहीं प्रेम उनके जीवन पथ का काँटा न बन जाए। प्रेम से घबराये हुए, जीवन के चक्कर में पड़े युवक भ्रमित हैं, यह जानते हुए भी कि—

"There is woman, behind every great man."

'निराला' ने इस संशय से उबार कर निरालों को जन्म देने के लिए लिख डाला—

"तेरे सह रूप में रंग कर,
झरे गान के मेरे निर्झर!"

बताया, प्रेरणा और प्रेरणादायिनी दुःखी जीवन का मूल है। प्रेरणा को आत्मसात् करो, जीवन तुम्हारा है। इस प्रकार 'निराला' ने नारी के विभिन्न रूपों की एक नवीन और विद्रोही रूप-रेखा प्रस्तुत की। जो उस वर्ग का मार्ग-दर्शक बन गया और यही मार्ग उन्हें निराला बना सकता है।

कवि-हृदय प्रकृति से आकर्षित न हो, असभव! निराला ने प्रकृति को देखा, नयी व्याख्या प्रकट की, प्रकृति का रहस्यवादी चित्रण हुआ। खैर! उनकी सबसे सुन्दर व्याख्या यह थी—प्रकृति दुःख में मानव को सांत्वना देती है, प्रकृति की क्रियायें, मानवीय चेष्टाओं से मिलती-जुलती हैं! आज का युवक यदि दुःखित हैं, जो वह अपने भावुक हृदय में प्रकृति का स्नेह भर ले! कितनी अच्छी व्याख्या है! माता-पिता ने तुम्हें मानसिक और शारीरिक सुख नहीं दिया तो क्या? प्रकृति सदा सुखदात्री है, त्राण देती है—

"गरजे सावन के घन घिर-घिर,
नाचे मोर बनों में फिर-फिर—
जितनी बार चढ़े मेरे भी तार
छन्द से तरह-तरह तिर,
तुम्हें सुनाने को मैं ने भी
नहीं कहीं कम गाने गाए!"

वर्षा हुई, सड़कें चिपचिपा रही हैं। इस चिप-चिपाहट भरी सड़क पर चलते हुए व्यक्ति की आँखों के समक्ष बाढ़ और सूखे के दृश्य छा जाते हैं! क्या कहे, वह इस वर्षा को? यह भी तो प्रकृति की ही देन है, वही प्रकृति जो तुम्हें सांत्वना देती है। इतने में वह 'निराला' के बाणी में कह उठता है, 'परिमल'

के 'वदलराग' की यह पंक्तियाँ !

"श्रस्त नयन मुख ढाँप रहे हैं,
जीर्ण बाहु है, शीर्ण शरीर
तुझे बुलाता कृषक अधीर
ऐ विप्लव के वीर !"

बादलों और वर्षा के इस यथार्थ और सुखदायक चित्रण की याद आते ही वह व्यक्ति प्रसन्नता से उस कीचड़ और चिपचिपाहट भरे पथ पर चला जाता है। सावन की लड़ियों और वर्षा का चित्रण सुनकर और देखकर वह प्रसन्न है।

दिन-रात परिश्रम कर अवसर पाते ही सरस्वती की साधना करने वाले आज भी कई व्यक्ति हैं, जिनका दुःख कोई बाँटने को तैयार नहीं। जब निराला' के चित्रण पर उसकी दृष्टि जाती है, वह प्रकृति से अपने सुख-दुःख कहता है और दार्शनिकता का जामा ओढ़ लेता है। कदाचित् इन्हीं जूझने वालों में कभी निराला मूर्त्त हो उठे।

पिता का हृदय हाहाकार कर रहा है, उसके बच्चों के तन पर चिथड़े हैं, पेट में अन्न के दाने नहीं गए। क्या करे वह ? भूख ने विद्रोह की शक्ति छीन ली, भाग्य का ही एक ढुलमुल संबल हाथ आ रहा है। वह दुःख सहता है, विक्षोभ से भर उठता है, लेकिन कुछ नहीं कह पाता ! 'निराला' ने इन पितृ-हृदयों को साँत्वना दी। 'निराला' इन्हें साँत्वना देने वाला कौन है ? वह एक पिता है, उसी वर्ग का, जिस वर्ग का पिता निराला की तरह अपने बच्चों का पालन-पोषण नहीं कर पा रहा है। निराला अपने पितृ-कर्त्तव्य की रक्षा नहीं कर पाए, कह उठे—

"अस्त्रु, मैं उपार्जन को अक्षम !
कर सका नहीं पोषण उत्तम !
धन्ये, मैं पिता निरर्थक था।"

यह व्यथा है, आज के कइयों भारतीय माताओं तथा पिताओं की। निराला ने अपना दुःख इनके साथ मिलाकर, अपने को इनका बनाकर, इन्हे साँत्वना देने का यत्न किया।

आज का वह वर्ग, जो बँधा है, मुक्ति के लिए छटपटा रहा हैं, जिसकी स्थिति बदतर है। जो नेताओं की कुर्सी की लड़ाई देख रहा है, जनता को वोट बेचते देख रहा है, 'डिग्रियों' की होड़ देख रहा है, 'एक्सचेंज' के धक्के देख रहा

है सिफारिश की आरामदेह नौकरी देख रहा है, बेरोजगारी के मुँह में समा रहा है, जो अनाज से भरे गोदाम देख रहा है, पास ही एक भूखे को मरा पड़ा देख रहा है, शिक्षा-दात्री पाठशालाएँ देख रहा है, रुपयों से उत्तीर्ण होते हुए छात्रों को देख रहा है। और इन सबको देखकर उसके मन में दुःख करुणा और विद्रोह एक साथ जाग रहे हैं। वह मुक्ति चाहता है इन सबसे, वह विद्रोह करना चाहता है, इन सब के प्रति।

'निराला' की सहानुभूति इस वर्ग से थी। इसके कारण उन्होंने विद्रोह किया। इस विद्रोह की प्रथम-पीठिका थी– मुक्त छन्द! उन्होंने कहा—"मुक्त, छन्द तो वह है, जो छन्द की भूमि में रहकर भी मुक्त है।.... ...मुक्ति का अर्थ है छन्द के बन्धनों से छुटकारा पाना।" उन्होंने अपने हृदय की आवाज की अभिव्यक्ति के माध्यम को विद्रोह द्वारा मुक्त किया। फिर क्षुब्ध स्थिति प्रकट की 'भिक्षुक' में–

'पेट-पीठ मिलकर है एक,
चल रहा लकुटिया टेक"

या

"देख कर काला-कलूटा नर बड़ा वेहाल है,
अस्थिपंजर शेष केवल दीन कृश कंकाल है,
....

घृणा की प्रतिमा बना, सांस अंतिम गिन रहा।"

इसी यथार्थता और कटु वास्तविकता में 'अंचल जी' ने 'किरण बेला' में करुणा के साथ वीभत्सता और विरोध भी दिखाया—

"गन्दी स्तब्ध कोठरी में अनजान,
सो रहा अन्धा कुत्ता एक,
वहीं पर मैली शैया,
धानी चुनरी बिछाये लेटी नारी,
घायल चील सी
अधनंगी अज्ञात
किसी श्रमजीवी का अभिशाप
चूसता फिर निचोरता सूखेस्तन
भूखा शिशु।" किरण-बेला (दोपहर की बात पृष्ट ४२-४३)

'निराला' ने करुणा के उत्ताप से हृदयलौह को लाल कर उस पर विद्रोह हथौड़े बरसाने प्रारम्भ कर दिए—

"जानता है नहीं, मान और सम्मान क्या,
किन्तु उसके भी हृदय हैं, क्या कहूँ अरमान क्या ?
है मनुज के पग-तले, मर गया भगवान क्या ?

इस पीड़ा जनित विद्रोह ने एक नई दिशा दी। फिर कहीं मुक्तछन्द में उनका मुक्त-विद्रोह फूट पड़ा—

"बीत गए कितने दिन, कितने मास,
पड़े हुए सहते हो अत्याचार
पद-पद पर सदियों के पद-प्रहार
बदले में पद में कोमलता लाते हो।
किन्तु हाय, तुम्हें नीच ही है कह जाते,
क्यों रंज, विरञ्ज के लिए ही इतना सहते हो ?"

'निराला' ने इस वर्ग में चेतना भरने का यत्न किया। इस विद्रोही चेतना से एक नवीन मार्ग अन्वेषित किया, जो कि एक विशाल संख्या के लिए कल्याण-कारी था।

आज का मानव सब कुछ खो चुका है, दुःख-दर्द में डूब चुका है। मानव की जड़ता देख, उस वर्ग को सुप्त देखकर कवि की अभिव्यक्ति फूट पड़ती है—

"सबसे चेतन मानव में भी,
विचित्र जड़ता है छाई,
वा वह चेतन नहीं अचेतन,
कुछ और हो गया है मानव।"

क्षुब्ध-त्रस्त और निराश मानव न चेतन है, न अचेतन। पेट की ज्वाला विद्रोह नहीं करने देती। विद्रोह अप्रतिष्ठित है। जो कोई कलम उठाता है, वह विद्यार्थियों को झटके में अनुशासनहीन कह डालता है। हड़ताल राजनीति का हथकण्डा है। विद्रोह वह कर नहीं पाता, परन्तु हर ओर की निराशा उसे ऐसा करने को विवश कर रही है। ऐसे में आवश्यकता है नवीन-चेतना की। यह चेतना 'निराला' ने दी और इसी चेतना में ही निराले मिल सकते हैं। निरालों की यह विद्रोही-चेतना ही समाज को एक नवीन रूप प्रदान कर पाएगी।

व्यक्ति हर ओर से ठुकराया हुआ और असंतुष्ट है। धर्म के नाम पर होते

झगड़े आए दिन वह देखता है, मूल में यह धार्मिकों के हथकण्डे मात्र हैं। वह सब धर्मों में सिकुड़न देखता है, वह सबों को आत्मसात् करना चाहता है। क्योंकि धर्म मानव मात्र का कल्याण है।

"हम में सम्मिलन सब धर्मों का,
हमारा एक धर्म है—मानव धर्म।"

'निराला' स्वयं बंगला और व्रजभाषा से हिन्दी की ओर प्रवृत्त हुए थे। आज भी कई लोग हिन्दी की ओर मुड़ रहे हैं। 'निराला का साहित्यिक जीवन विभिन्न साहित्यिक प्रभावों के सम्मिश्रण और समन्वय' से निर्मित हुआ था। आज का युवक वर्ग भी सब प्रकार के प्रभावों को अपने अन्दर समाविष्ट कर रहा है। कितनी प्रसन्नता होती है, जब पूर्वी भारत के युवक को उत्तरी भारत की भाषा बोलते सुना जाता है। कितनी प्रसन्नता होती है, जब वह शुद्ध-निष्ठ तथा यथार्थ और वास्तविक भाषा में बातें करता है। बहुत प्रसन्नता होती है, जब लोगों को 'निराला' की भाँति गरल पीकर अमृत उगलते देखा जाता है। खोज वैसे निरालों की ही करनी है।

निराला नवीनता और विद्रोह के मूल स्वर थे। विद्रोह से उन्होंने साहित्य को नवीन रूप दिया। साहित्य में समाज का विद्रोही स्वर प्रदान कर उन्होंने समाज को अभिनय स्वरूप दिया है। हमें अपनी इस पीढ़ी में विद्रोह को सार्थक और शृंखलाबद्ध रूप में, नए परिवेश में सजाकर मानव या शोषित वर्ग का उत्थान करना है। 'निराला' इसी निम्न-मध्य वर्ग में जन्मे-पले और नवीनता तथा विद्रोह के पृष्ट-पोषक बने। 'निराला' की खोज इसी वर्ग में हो सकती है, 'निराला का रूप इसी में मूर्त्त हो सकता है। 'निराला' शाश्वत है, यदि हम इस वर्ग को सुधार सकें, इसका उत्थान कर सकें। कदाचित् तभी हम सफल हो पायेंगे निराला की खोज में ....।
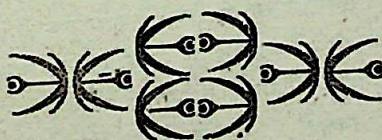
निराला की 'विधवा' शीर्षक कविता

डॉ० स्वर्ण किरण, सोहसराय (पटना)

निराला की 'विधवा' शीर्षक कविता भारतीय विधवा के उस आदर्शीकृत रूप को सामने रखती है जिसका साक्षात्कार एक ओर जहां आंखों को नम करता है वहीं दूसरी ओर विचार-विश्लेषण का भी अवसर देता है। कवि ने भिन्न-भिन्न उपमानों एवं वस्तुनिष्ठ पर्यायों के माध्यम से विधवा का रूप-चित्र, यहाँ सामने रखा है और दलन, शोषण, उत्पीड़न आदि से आपूरित उसके जीवन की व्यथा की अकथ कथा कहा है। विधवा इष्टदेव के मन्दिर की पूजा के समान, दीपशिखा-दीप की लौ-के सदृश शांत, भाव-मग्न, कठोर काल के तांडव नृत्य की स्मृति-रेखा सी क्षीण टूटे हुए पेड़ की छुटी हुई लता के समान दीन-दुखिया है। कवि ने विधवा को आस्तिक पूजारूप, पाशविक प्रतिक्रिया के ज्वार से विरहित, शांतचित्त, भावविभोर, काल शापित, संत्रस्त, टूटी हुई वृक्षलतिका के समान सहारा खोजने या करुणा तहसीलने की क्षमता से संपन्न बतलाया है। कवि की दृष्टि में विधवा का यह रूप भारत की विधवा का ही रूप है क्योंकि भारतेतर देशों की विधवा को अपेक्षाकृत अधिक छूट है, वह अपने पति की देहमुक्ति के बाद अपने को उससे संवन्द्ध नहीं के वरावर मानती है।

पर इसका तात्पर्य यह नही कि भारत की विधवा स्वतंत्र चिंतना एवं भावना से विमुक्त मिट्टी का पुतला मात्र है या काष्ठमूर्ति है जिसके पास न संवेदना की शक्ति है न दूसरों को अपनी ओर आकृष्ट करने का कोई जादू या हथकंडा। भारत की विधवा वसंत, ग्रीष्म', वर्षा, शरद, हिम और शिशिर इन छः ऋतुओं के शृंगार प्रसाधन में रस नहीं लेती या लेती भी है तो कल्पना जगत् में। फूलों से लदे' विकसित जंगल में उनका पद-संचार नीरव रूप में शांत रूप में संभव है वह व्यथा की भूली हुई कहानी या उसका एक सपना है। उसके सुहाग का दर्पण टूट गया है पर उसमें देखा गया जीवन धन-प्रियतम का बिंब चिर अक्षुण्ण है। जीवनधन प्रियतम उसके अवल हाथों में बल भरने का माध्यम है, उसके गन्तव्य विस्मृत जीवन के लिए ध्रुवतारा, मतलब अक्षय तारा जिसका न स्थान परिवर्त्तन संभव है न ही रूप परिवर्त्तन। मानो भारतीय विधवा का जीवन पति से मंवद्ध, पति से संचालित पति के प्रति अर्पित और पति की प्रगति, विकास और उन्नयन के लिए है, उसका अपना

कोई इतर उद्देश्य नहीं। वह अपने को पति के चरणों में सौंपकर जैसे निश्चित हो जाती हो किन्तु वह कामचोर नहीं, वह नियति के हाथों का खिलौना होने पर भी अपनी कर्त्तव्यनिष्टा से अपने को सक्रिय रखती है और अकर्मण्य की संज्ञा से अभिभूपित होना उसे बिल्कुल ही अच्छा नहीं लगता। पति-ध्रुवतारा उसके जीवन में खूँटे या कील की तरह गड़ नहीं गया है, उन्मुक्त है, दूर है पर सदैव करुणा की धारा बहाता है, उसके जीवन में प्रेरणा-प्रोत्साहन भरता है।

तात्पर्य यह है कि भारतीय विधवा का जीवन अपने पति से संबद्ध अवश्य है पर पति के लिए कारगार रूप नहीं है, पति के लिए कोई भी जाल या प्रतिबन्ध नहीं है कि पति अपने जीवन में घुटता रहा मृत्यु के अनन्तर घुटन, पीड़न आदि का शिकार बन जाए। बल्कि विधवा के प्रति सम्वेदना के भाव छोड़ जाता है, जिससे विधवा की आँखें गीली-गीली बनी रहती हैं। ऐसी गीली-गीली जिन्हें देखकर मन-मधुकर की भींगी हुई पाँखों का बोध होने लगता है। मतलब, विधवा की आँखों को देखकर मन-भ्रमर द्रवित होता है, रसावेश में आकर गुञ्जार करता है भले गुञ्जार में उसकी हार्दिक वेदना लगी-लिपटी हो। विधवा अपने को करुणा की नदी के म्लान तट पर टूटी हुई कुटिया को मौन बढ़ाकर दुनिया की नजरों को बचाकर अस्फुट स्वर में रोती है, टूटे हुए भींगे आँचल में मन को लपेटकर। दुःख के कारण इसके होठ रूखे-सूखे रुक्ष और शुष्क हो जाते हैं उसकी दृष्टि झुक जाती है शायद खुलकर वह नहीं रो पाती पर उसका रुदन धैर्यपूरित आकाश, निश्चल समीर सरिता की लहर सब साफ-साफ सुनते हैं पर बेचारी विधवा को धैर्य नहीं प्रदान कर पाते। विधवा का जीवन धैर्यच्युत रुदन का जीवन है। उसका दुःख असीमित है, उसके दुःख का वहनकर्त्ता शायद उसका पति ही है जो शरीरतः अब उसके साथ नहीं है अतः उसके सामने ऐसी समस्या का उठ जाना स्वाभाविक ही है इस दुःख का भार कौन ले सके और वह दुःख दैवप्रद है या दैव के द्वारा अनुशासित है, नियंत्रित है। और दैव भी ऐसा है जो अत्याचारी है, कठोर है, निर्दय है, हृदय शून्य है कि वह टूटे हुए पर दीन-दुखियों पर असहायों पर अत्याचार करना जानता है, उसके अश्रुपात को देखकर पुलकित होता है, उसको दुःख में तड़पते हुए देखकर तड़पता नहीं, उछलता है। शायद वह अवसादवादी—*Sadist* है, सबको उन्मथित करता रहता है, सबको विकल विह्वल बनाता है, सबके आशा-कमल पर ओषकण ही नहीं, तुषार बरसाता है। विधवा के अश्रुपान का वह कारण है पर विधवा, विशेषतः भारतीय विधवा भी

अश्रुपात से डरने वाली स्त्री नहीं, बल्कि पल्लवों से जैसे ओसकण गिरते हैं वैसे वह अपने नेत्र-पल्लव से आँसू के कण गिराती है जो भारत के लिए चिंता का विषय है। भारत के सर जाने, भारत के सर के नीचा होने या करने के पीछे विधवा का क्या कोई षडयंत्र-कौशल है ?

निराला की विधवा भारतीय जन जीवन के लिए कलंक चिह्न है या गौरव आदर्श ? इष्टदेव के मन्दिर की पूजा सी होना, दीप की लौ के समान शांत रहना, भाव-विभोर होना, शृंगार प्रसाधन में रत न रहकर कटा-कटा रहना, केवल व्यथा के भार का वहन, आँखों से अश्रुपात करना और अपने दुःख को दूसरों पर लादने का प्रयास नहीं करना निस्संदेह विधवा का गौरव आदर्श ही है। स्वयं कवि की दृष्टि में विधवा में ऐसा कोई दोष नहीं दीखता कि उसे कलंक चिन्ह के रूप में स्वीकार किया जाय ? वह शास्त्र ज्ञाता के रूप में मालूम पड़ती है जो षड्ऋतुओं के मनोहारी दृश्यों से विरक्त रहती, ब्रह्मचारिणित्व का पालन करती, मैथुन को वर्जित प्रदेश मानती तथा तांबूल आदि का चर्वन नहीं करती।

मृत भर्तृरि ब्रह्मचर्च्यं तद–वारोहण वा इति,
ब्रह्मचर्यं मैथुनवर्ज्जनं ताम्बूलादिवर्ज्जनञ्च

वस्त्र धारण, गंधद्रव्यादि-बढ़िया तेल, चंदन आदि सेवन, भिष्टान्न-भक्षण करके अपनी सहेलियों के साथ हिलमिलकर कोई वाणिज्य-व्यवसाय प्रारम्भ कर समय विताना विधवा को स्वीकार नहीं है। वह भारतीय परंपरा को किंचित् जानती है और अपना सिर नहीं उठाती अपने विद्रोह–भाव का परिचय नहीं देती वह क्रांतिकारिणी नहीं है कि पति की मृत्यु के वाद किसी दूसरे को पति के रूप में ग्रहण कर ले या अपने विधवात्व को भूल कर सधवा सुलभ अथवा सधवाकाभ्य उपकरणों में अपने को लीन रखे। वह विदुषी नहीं होकर भी विदुषी है विवेक का परिचय देती है, बुद्धि के डण्डे का गलत प्रयोग नहीं करती। इहलोक तथा परलोक दोनों जगह पति को अपनी परमगति मानती है-इहामुत्र च नारीनां परमा हि गतिः पतिः और फिर यह सोचती रही है कि

सुपुण्ये भारतेवर्षे पतिसेवा करोति या ।
बैकुंठ स्वामिना सार्द्ध सा याति ब्रह्मणः शतम् ।।

अर्थात् सुंदर पुण्य भूमि भारतवर्ष में जो स्त्री पतिसेवा किया करती है वह बैकुंठ में पति के साथ जाती है और सैकड़ों ब्रह्म के पाने का सुख प्राप्त करती है। पति, पिता, बंधु, भ्राता, गुरु आदि सब कुछ है और विधवा पति का स्मरण कर,

दान, यज्ञ तीर्थाटन आदि सबका पुण्य सहज रूप से प्राप्त कर ले सकती है। उसकी दृष्टि में पतिव्रतार्थञ्च पतिरूपी हरी: स्वयम् अर्थात पतिव्रता व्रत के लिए पतिरूपी स्वयं हरि ही उपस्थित है। निराला की विधवा अश्रुपात करती है, कभी दूसरे को दिखलाकर कभी बिना दिखलाये हुए। वह रसावेशी नहीं, असंयत विद्रोही नहीं, न प्रतिक्रियावादी है अकेलापन या अजनबीपन का वह शिकार नहीं। कवि ने उसके सहज अनुभूयमान रूप की ओर हमारा ध्यान खींचा है। उसका चित्र जैसे पारंपरीण चित्र है। कुछ चमत्कारपूरित अथवा वैलक्षण्ययुक्त नहीं। उसका दुःख, उसका हीन-भाव, उसका शांतचित्त, उसकी विवशता, उसकी सरलता, उसकी कर्त्तव्यनिष्ठा, उसकी दृढ़ता, उसकी कष्टसाहिष्णुता आदि उसके व्यक्तित्व को और आकर्षक व्यक्तित्व बनाते हैं। कवि ने तुकांत छंद के द्वारा उसके जीवन की तुक को शायद रुपायित किया है किन्तु अंत तक पहुँचते-पहुँचते ऐसा लगता है कि छंद-परिवर्त्तन के कारण उसके जीवन का तेवर बदल गया और कवि विधवा के स्वर में स्वर मिलाकर जैसे दैव को कोसता है और अपनी सहृदयता एवं दीनवत्सलता का परिचय देता है। विधवा कवि निराला के जीवन दर्शन एवं दृष्टिकोण को प्रति-ध्वनित करने वाली एक अमर कृत्ति है जो रूप में सामान्य होने पर भी उदात्त गुणो से आपूरित है।

२६-४-७१
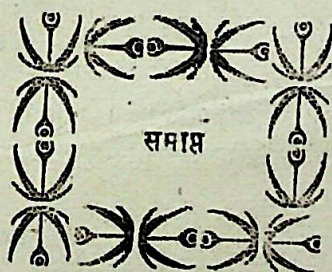
प्रियवर,

'स्मार्त्त निराला' वाला अंक मिला। आपकी साहित्य-सर्जना में प्रस्तुत पुस्तक एक सुन्दर उपलब्धि है। एतदर्थ धन्यवाद स्वीकार करें।
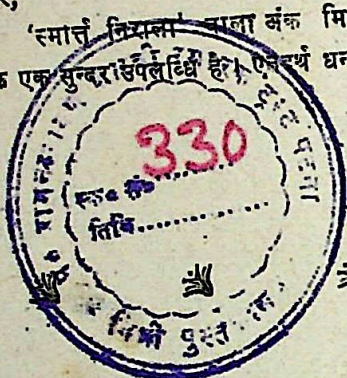
आपका

डा० वचनदेव कुमार एम० ए० डी० लि

हिन्दी विभाग

पटना कालेज (पटना)

सराय वाला अली

२७-४-७१

मेरे अपने ही प्रियवर नरेश शर्मा,

आपने 'स्मार्त्त निराला' भेजी है। आभार स्वीकार कीजिए। पुस्त[क में] मूर्द्धन्य विद्वानों के चिन्तन एवं शोधपूर्ण निबन्धों का संग्रह किया गया है।

आपका

डा० तेजबहादुर 'सूर्य'

सम्पादक 'इन्टेलेक्ट'

डी० १२८, सेठीभवन

बापू नगर जयपुर—४

१९ अप्रैल ७१

बन्धुवर गुलशन,

प्रेषित पुस्तक 'स्मार्त्त निराला' प्राप्त हुई। महाप्राण निराला के काव्य साहित्य पर शोध करने के आकांक्षी व्यक्तियों के लिए पुस्तक अत्यधिक लाभप्रद है।

आपका

नन्दलाल शर्मा

२०-४-७१

मान्यवर शर्मा जी

'स्मार्त्त' निराला की प्रति मिली। इसके लिए धन्यवाद।

आपका

अयोध्या

श्री जगन्नाथ ज्ञान कुटीर

बख्तियारपुर (पटना)

पुस्तक प्राप्ति स्थान

१ श्री सूरज प्रसाद मिश्र, कार्यकारी अध्यक्ष, ३४ कल्याणी रोड, साकची, जमशेदपुर-१

२ पी० एस० बुक स्टाल बस पड़ाव साकची, जमशेदपुर-१

३ निराला परिषद् मसौढ़ी (पटना)

४ हिन्दी पुस्तक ऐजेन्सी मुरादपुर (पटना)

५ संजय प्रिंटिंग प्रेस, मसौढ़ी (पटना)

६ शारदा ब्यूटी स्टोर्स, केसरी मार्केट जहानाबाद [गया]